वैष्णोदेवी दरबार यात्रा

वैष्णोदेवी
दरबार यात्रा

देवी की उत्पत्ति कैसे हुई ?

माता वैष्णव देवी कौन है, कहां है ?

बाण गंगा, चरण पादुका, आदिकुमारी, भैरव मन्दिर कैसे बने?

देवी को नारियल की भेंट क्यों चढ़ाई जाती है ?

वैष्णवी माता कब प्रकट होगी ?

देवी के जागरण का क्या महात्म् है ?

नवरातों में व्रत क्यों रखे जाते हैं ?

सम्पूर्ण जानकारी अन्दर के पृष्ठों में———

श्री वैष्णाव देवी दरबार यात्रा

- □ देवी की उत्पत्ति, पौराणिक कथा एवं इतिहास
- □ पर्यटक पथ प्रदर्शन एवं सूचना
- □ भक्त श्रीधर को दर्शन एवं भैरव की मुक्ति का वृतान्त
- □ ध्यानू भक्त एवं ताराराानी की कथाएँ
- □ राजा चन्द्रदेव की कथा
- □ आरतियां इत्यादि ।

सचित्र नवीन संस्करण

मूल्य दो रुपये

कहां क्या है ?

१. देवी की उत्पत्ति
(पौराणिक कथा)

पृष्ठ संख्या

२. श्री वैष्णव देवी दरबार यात्रा
(इतिहास और पथ प्रदर्शिका)

देवी की उत्पत्ति
पौराणिक कथा

तारणि लोक उधारणि भूमहि दैत्य संहारणि चण्डी तुही है ।
कारण ईश कला कमला हरि अद्रि सुता जहि देखो उही है ।।
तामसता ममता नमता कविता कवि के मन मध्य गुही है ।
कीनो है कंचन लोह जगत्त्रय पारस मूरति जाहि छही है ।।

पौराणिक कथानुसार एक समय सुरथ नाम के राजा ने कुटुम्ब से उदासीन होकर, राज-पाट त्याग कर, मुनियों जैसा वेष धारण कर लिया और घोर वन की ओर चले गये । वहां उनकी भेंट समाधि नामक एक वैश्य से हुई जो ज्ञान प्राप्ति की इच्छा से घर छोड़कर आया था । दोनों मिलकर सुमेधा ऋषि के आश्रम पर पहुँचे । सुमेधा ऋषि ने उन्हें आदि शक्ति महामाया की निम्न कथा सुनाई—

एक बार जब भगवान विष्णु अपार सागर में अपनी नाग शैया पर शयन कर रहे थे तो उनकी नाभि कमल से

पैदा हुए ब्रह्मा ने कानों की मैल से अति दीर्घ देह वाले मधु कैटभ नाम के दो दैत्यों की रचना की। उन राक्षसों को देखकर लोकेश भयभीत हो गये और हृदय में असुरों के नाश के लिए जगमाता (शक्ति) का ध्यान करने लगे।

मधु कैटभ वध

इधर मधु कैटभ ने अपने बाहुबल से अन्य देवताओं को सताना और उनके अधिकार छीनने आरम्भ कर दिए। कई देवताओं ने मिलकर उनसे युद्ध किया लेकिन पाँच हजार वर्ष तक लड़कर भी देवता महाबली दैत्यों को न मार सके। हारकर देवताओं ने शक्ति की आराधना की तो शक्ति ने चण्डी रूप में प्रकट होकर असुरों का संहार किया। राक्षसों के वध से देवताओं को पुनः राज्य प्राप्त हुए और समाज सुखी हुआ।

बहुरि भयो महिषासुर तिन तो क्या किया।
भुजा जोर करि युद्ध जीत सभ जग लिया॥

बहुत समय बाद पुनः एक राक्षस महिषाषुर उत्पन्न हुआ जिसने अपनी भुजाओं के बल पर समस्त संसार को जीत लिया। देवताओं और राक्षसों में एक सौ वर्ष तक घोर संग्राम हुआ। परिणाम यह हुआ कि देवताओं को

क्षसों से पराजित होना पड़ा और उनका समस्त राज-पाट
यों ने संभाल लिया। अपने अधिकार खो जाने पर देवता
कत्र होकर ब्रह्मा जी के पास गये और महिषासुर के
न्याय की सब कथा कह सुनाई।

देवताओं की बात सुनकर ब्रह्मा जी बोले कि मैं तो
हिषासुर को वरदान दे चुका हूँ कि उसकी मृत्यु किसी
ुंवारी के हाथों से होगी। हम उसे पराजित नहीं कर
सकते।

ब्रह्मा जी के मुख से यह शब्द सुनकर देवताओं में
नीरवता छा गई। वह बोले—'नहीं प्रभु, हमें हमारे अधिकार
चाहिएँ। हमारी सहायता का कोई अन्य उपाय निकालिए!

महिषासुर के विनाश के लिए अन्य उपाय की खोज में
समस्त देवता ब्रह्मा जी को साथ लेकर भगवान शंकर और
भगवान विष्णु के पास गये। देवताओं की दुःखी आत्माओं
ने राक्षसों के अत्याचार का वर्णन उन्हें भी सुनाया...हे
प्रभु उन महापराक्रमी दैत्यों ने हमें अपने अधिकारों से
वंचित कर दिया, घर-बार सब उजाड़ दिए...लोकेश !
अग्नि, सूर्य, इन्द्र, चन्द्र, वरुण हम सब देवताओं का सुख-
चैन छीन कर दैत्यों ने हमें जबरदस्ती बाहर धकेल दिया
है। हम आपकी शरण हैं, रक्षा करो।

देवताओं के तेज से देवी का प्रकट होना—

देवताओं की यह दुखमय कथा सुनकर भगवान विष्णु और शंकर जो के मस्तक से बिजली कड़कने लगी ! क्रोध के कारण मुख से एक महान शक्तिशाली तेज प्रकट हुआ। ब्रह्माजी के क्रोधित शरीर से भी इसी प्रकार का तेज निकला। जब समस्त देवताओं के तेज एक ही स्थान पर प्रकट हुए तो वह महान तेज संसार के हर कोने को रोशन करने लगा। जब यह तेज एकत्र हुए तो उसने एक अति सुन्दर नारो 'देवी' का रूप धारण कर लिया। जो देव नगरी में सबसे महान् और शक्तिशाली प्रतीत होता था। देवताओं की देह से निकले हुए इस तेज से ही शक्ति के विभिन्न अंग बने—

भगवान शंकर के तेज से उस देवी का मुख प्रकट हुआ, यमराज के तेज से मस्तक के केश, विष्णु के तेज से भुजायें, चन्द्रमा के तेज से स्तन, इन्द्र के तेज से कमर, वरुण के तेज जंघा, पृथ्वी के तेज से नितम्ब, ब्रह्मा के तेज से चरण, सूर्य के तेज से दोनों पैरों की उंगलियाँ, वसुओं के तेज से दोनों हाथ की उंगलियां, प्रजापति के तेज से सारे दाँत, अग्नि के तेज से दोनों नेत्र, संध्या के तेज से भौंहें, वायु के तेज से कान और अन्य देवताओं के तेज से देवी के भिन्न-२ अंग बने।

इसके पश्चात् भगवान शिव ने उस देवी को अपना

त्रिशूल दिया, विष्णु ने चक्र, वरुण ने दिव्य शंख और पाश, अग्नि ने शक्ति व बाणों से भरे तरकश, इन्द्र ने वज्र, यमराज ने दण्ड, प्रजापति ने स्फटिक मणियों की माला, ब्रह्मा जी ने कमण्डल, काल ने ढाल तलवार; इसी प्रकार भगवान् राम ने धनुष, हनुमान ने गदा आदि अस्त्र-शस्त्र उस देवी को भेंट किए। सूर्य ने उसके रोम-कूपों में अपनी किरणों को भर दिया। समुद्र ने बहुत उज्जवल हार, कभी न फटने वाले दिव्य वस्त्र, चूड़ामणि, दो कुण्डल, हाथों के कगन, दोनों भुजाओं के लिए मयूर, पैरों के नूपुर, गले के लिए सुन्दर हंसली और सब उंगलियों में पहनने के लिए अंगूठियां भेंट कीं। विश्वकर्मा ने निर्मल फरसा, लक्ष्मीजी ने कभी न मुरझाने वाले कमल के फूल और हिमालय पर्वत ने सवारी के लिए सिंह प्रदान किया।

इस प्रकार सब देवताओं ने देवी को अनेक प्रकार के आयुधों से सुसज्जित करके सम्मानित किया और महिषासुर के वध के लिए देवी से प्रार्थना की।

महिषासुर वध—

महाशक्ति ने जब क्रोध में आकर गर्जना की तो भू-मण्डल कांपने लगा। आकाश पर बिजली कड़कती प्रतीत होने लगी। यह देखकर सभी देवताओं ने संगठित स्वर से शक्ति की जय बोली। इस समय महिषासुर अपनी भक्ति

में लीन था उसने भी देखा कि पृथ्वी से आकाश तक उथल पुथल मची है। किसी अज्ञात शक्ति की जय-जयकार हो रही है। क्रोध में आकर उसने उस शक्ति का नाश करने की ठानली और वह महाबली अपने सारे दैत्यों को लेकर शक्ति को मारने के लिए दौड़ा। महिषासुर के देवी की ओर देखते ही आँखें चुंधियां गई, दुर्गा अपने विराट औ क्रोधित रूप में खड़ी थीं।

देवी का युद्ध दैत्यों से हुआ।

सर्वप्रथम महिषासुर का सेना नायक देवी से लड़ने आया। लाखों राक्षस अनेक अस्त्रों शस्त्रों से अकेली देवी पर लगातार प्रहार करते रहे और जगदम्बा मातेश्वरी दुष्ट आत्माओं का खात्मा करती रही। माँ दुर्गा ने कई बड़े-२ राक्षसों को अपनी गदा और त्रिशूल से मौत की नींद सुला दिया। अगनित राक्षस मारे गये और हजारों अपनी बाहें खो बैठे। कइयों का सिर धड़ से अलग हो गया। जो मूर्ख थे वह मैदान छोड़कर भाग गये। कई दैत्य मौत के डर से देवी के पावों पर गिरकर क्षमा मांगते रहें।

कवि ने युद्ध का वर्णन निम्न प्रकार से किया है—

घायल घूमत हैं रण में इक लोटत हैं धरणी बिललाते।
दौरत बीच कबन्ध फिरें तहिं देखत कायर हैं डरपाते।।
यों महिषासुर युद्ध कियो तब जम्बुक गिद्ध भये रंग राते।
श्रोण प्रवाह में पाय पसारिकै सोये हैं शूर मनो मदमाते।।

दैत्यों के इस घोर विनाश को देखकर महिषासुर का सेनापति चिक्षुर क्रोधित स्वर से चिल्लाया—'ऐ कन्या, तूने मेरी सेना को तो मौत के घाट उतार दिया लेकिन तुझे मेरी शक्ति का अनुमान नहीं अब तू मेरे लोहे जैसे बलशाली हाथों से बचकर नहीं जा सकती। मैं तेरा सर्वनाश कर दूँगा।' और फिर पल भर में ही सेनापति अपने बचे हुए साथियों के साथ तीरों की ऐसी बौछार करने लगा कि जैसे आंधी चलने से रेत उड़ती है। रणभूमि की यह दशा और राक्षसों के इतने तेज प्रहार को देखकर देवी ने भी क्रोध से तीरकमान निकाला और एक तीर दैत्य की ओर छोड़ा। उस एक तीर से ही इतने तीर निकलने लगे कि जैसे भयानक रात में लाखों जुगनू भटक रहे हों। इन तीरों ने राक्षसों के सीने छलनी कर दिए। लड़ते-लड़ते सेनापति चिक्षुर के सारे हथियार समाप्त हो गए तो वह ढ़ाल और तलवार लेकर ही मातेश्वरी की तरफ दौड़ा। उसने तलवार से देवी पर प्रहार किया लेकिन जब तलवार देवी के शरीर से टकराई तो टुकड़े-टुकड़े होकर पृथ्वी पर

गिर पड़ी। फिर चिक्षुर ने त्रिशूल से देवी दुर्गा पर वार किया। चमकते हुए त्रिशूल को अपनी ओर आता देखकर जगदम्बा ने भी उस पर त्रिशूल फेंका। देवी का त्रिशूल चिक्षुर के त्रिशूल से टकराकर उसे भी चिक्षुर की ओर ले चला और फिर उस त्रिशूल ने सेनापति का सीना चीर डाला।

कवि की भाषा में रणभूमि का चित्रण देखिए—

गूद सने सिर लोहू में लाल कराल परे रण में गज कारे।
ज्यों दरजी यम मृत्यु के शीत में वस्त्र अनेक कता करि डारे॥

अपनी सेना का खून पानी की तरह बहता देखकर महिषासुर ने एक विकराल भैंसे का रूप धारण करके देवी को मारने की भी असफल कोशिश की। यह देखकर जगदम्बा को बड़ा क्रोध आया और उसने किसी प्रकार दैत्यराज महिषासुर को बांध लिया। लेकिन उसी समय महिषासुर ने भैंसे का रूप त्यागकर सिंह रूप धारण कर लिया। जब शक्ति ने उसे भी अपने वाणों से वश में कर लिया तब उसने अपने आप को एक बड़े गजराज में बदल लिया और अपनी सूंड से देवी को अपनी ओर खींचने लगा। देवी ने भी तीव्र प्रहार किया और गजराज की सूंड काट डाली। तब पुनः महिषासुर महादैत्य ने अपने को भैंसे के शरीर में परिवर्तित कर दिया।

महिषासुर गर्जने लगा !

उसके स्वर से त्रिलोकी व्याकुल हो उठी !!

इस समय माता भी अपनी शक्तियों से महिषासुर के चलाये शस्त्रों को चकनाचूर करने लगी। तीव्र क्रोध में आकर शक्ति ने भी गर्जना कर कहा—'तूने अभिमान में आकर, देवताओं से उनके अधिकार छीनकर, उनकी पवित्र आत्माओं को बड़ा कष्ट दिया है। मूर्ख ! मैं तेरा सर्वनाश करके ही चैन लूंगी।' इतना कहते ही देवी ने उछल कर महिषासुर को पकड़ लिया। अपने पांव तले दबाकर उसके कण्ठ पर त्रिशूल का प्रहार किया तो महिषासुर अपने असली रूप में भैंसे के शरीर से बाहर आने लगा। अभी वह आधा ही बाहर निकल पाया था कि देवी ने अपनी शक्ति से उसे वहीं रोक दिया और तलवार से उसका सिर काट डाला।

देवी मारयो दैत्य इमि लरयो जो सम्मुख आये।
पुनि शत्रुन की सैन्य में धसी सुशंख बजाये ॥

X X X

जब महिषासुर मारयो सब दैत्यन को राज।
तब कायर भाजै सभै छाडयो सकल समाज ॥

अपने महाराज दैत्य महिषासुर की इतनी बुरी दशा

देखकर शेष सभी दैत्य मैदान छोड़कर भाग गये । महिषासुर को मरा देखकर सब देवी देवताओं में खुशी की लहर दौड़ गई और सब मिलकर मातेश्वरी दुर्गा जी की आरती उतारने लगे । विजय प्राप्ति के बाद समस्त देवताओं ने देवी के आगे नतमस्तक होकर बारम्बार यही विनय की– "आपने महान बलशाली राक्षस को मारकर हमें प्रसन्न किया, हमारे अधिकार हमें प्राप्त हुए । हमारी सब इच्छायें पूर्ण हो गई हैं । अब हम आपसे यही विनय करेंगे कि जब भी हम आपका स्मरण करें आप दर्शन दिया करें और हमारे संकटों का निवारण करें । हम आपके भक्त हैं हमारी मुसीबत के समय में आप हमारे शत्रुओं का नाश करके सबको प्रसन्न किया करें ।"

लोप चण्डिका ह्व गई सुरपति को दे राज ।
दानव मार अभेष करि कीने सन्तन काज ।।

शुम्भ और निशुम्भ का अत्याचार

काँप समुद्र उठे सगरे बहु भार भई धरिणी गति औरे ।
मेरु हल्यो दहल्यो सुरलोक जबै दल शुम्भ निशुम्भ के दौरे ।।

महिषासुर के बाद शुम्भ और निःशुम्भ दो और असुर हुए जिन्होंने इन्द्र, सूर्य, अग्नि आदि देवताओं को अधिकार हीन करके, राज्य छीनकर इन्द्रपुरी पर आसन जमा लिया ।

एक बार फिर देवताओं को राक्षसों से अपमानित होना पड़ा। तब देवताओं ने मातेश्वरी को याद किया और विचारा कि माता ने हमको वरदान दिया था कि जब भी मेरे भक्तों पर आपत्ति आवेगी मैं उनकी रक्षा करूँगी। महिषासुर की तरह नये उठने वाले राक्षसों का वध कर दूंगी।

श्री दुर्गा जी के इस आश्वासन का ध्यान कर देवता माता के आमन्त्रण के लिए हिमालय पर जाकर उनकी स्तुति करने लगे। इस प्रकार जब सारे देवता मिलकर शक्ति का आह्वान कर रहे थे तो देवी पार्वती उधर से आ निकलीं। उस अति सुन्दर पार्वती ने देवताओं से पूछा—'आप किसका आह्वान कर रहे हैं, किसकी स्तुति में मग्न हैं ?' 'हे भगवती, शुम्भ निशुम्भ ने हमारा अपमान किया है उन्हीं के अत्याचारों से पराजित होकर हम यहां, सहायता के लिए श्री दुर्गा जी को याद कर रहे हैं।' देवताओं का यह उत्तर सुनकर पार्वती जी वहां से लोप हो गईं।

एक दिन शुम्भ और निशुम्भ के दो शक्तिशाली दूत जिनका नाम चण्ड और मुण्ड था घूमते हुए हिमालय पर आ निकले। वहां उन्होंने अति सुन्दर रूप में माँ अम्बे को भक्ति में लीन देखा। उन्होंने ऐसी मनोहर रूप की नारी

को पहले कभी न देखा था, रूप ऐसा सुन्दर कि पूरा हिमालय आलोकित हो रहा था। चण्ड और मुण्ड ने इस अनुपम सुन्दरी का वर्णन तुरन्त जाकर अपने स्वामी शुम्भ और निशुम्भ से इस प्रकार किया—उसका दुःख दूर करने वाला चन्द्र जैसा मुख है। पलकें सर्प की शोभा को चुराती हैं। नेत्र कमल से बढ़कर हैं, धनुष जैसी भवें हैं, बाण जैसी पलकें हैं। सिंह जैसा कटिभाग है, हस्ति जैसी गति, रति की शोभा को भी हरने वाली है। हाथ में खडग है जो सूर्य के समान प्रकाशवान हैं, मनोहर रूप धारण किए वह शिव की अर्धांगिनी प्रतीत होती है।

सुन्दरी की ऐसी प्रशंसा सुनकर शुम्भ ने दूतों को देवी के पास विवाह का प्रस्ताव देकर भेजा। दूतों ने जाकर जब देवी से शुम्भ की बात कही तो देवी ने उत्तर दिया—रे मतिहीन, जाकर, दैत्य से कह दे कि जो मुझ को युद्ध में जीतेगा मैं उसी को वर मानूंगी।

धूम्रनयन वध—

शुम्भ और निशुम्भ की सभा में दूत ने जाकर जब देवी की यह बात कही तो सभा के मध्य से धूम्रनयन मामक राक्षस ने उठकर बड़े गर्व से कहा—मैं उसको बातों में

ही रिझाकर ला सकता हूं अगर वह न मानेगी तो केश पकड़कर घसीट लाऊँगा।

क्रोध करे तब युद्ध करों रण शोणित की सरितान बहाऊँ।
लोचन धूम कहे बल आपनो श्वासन साथ पहार उड़ाऊँ॥

धूम्रनयन की यह बात सुनकर शुम्भ ने उसे देवी को लाने के लिए एक बड़ी सेना देकर भेज दिया। इसी सेना में शुम्भ के दो बड़े विश्वस्त दैत्य चण्ड और मुण्ड भी थे।

उधर चण्ड-मुण्ड के साथ एक बड़ी राक्षसी सेना को आता देखकर देवी को बड़ा जबरदस्त क्रोध आ गया और इस क्रोध के कारण जगदम्बा का मुख काला पड़ गया और तुरन्त ही वहां विकराल रूप में काली देवी प्रकट हुई। बड़े-बड़े राक्षसों को मारती हुई महाकाली ने अपनी कृपाण से धूम्रनयन का सिर एक झटके में अलग कर दिया और महाबली धूम्रनयन सदा के लिए रणभूमि में सो गया।

चंड-मुंड वध–

जब सेनापति धूम्रनयन मारा गया तो मुण्ड को क्रोध आ गया वह आगे बढ़-बढ़ कर काली पर हमला करने

लगा । मुण्ड से भयानक युद्ध के बाद देवी ने मुण्ड का मुण्ड इस प्रकार अलग कर दिया जैसे बेल से कद्दू गिर जाता है।

मुण्ड को मुण्ड उतार दियो अब चण्ड को हाथ लगावत चण्डी।

अब देवी ने बरछा लेकर ऐसे मारा कि चण्ड का सिर धड़ से अलग होते एक क्षण की देर भी न लगी ।

रक्तबीज वध—

शोणित बिन्दु को शुम्भ निशुम्भ कहा।
अब तुम जाहु महा दल लैके ॥

अपने महान दैत्यों के मारे जाने पर शुम्भ निशुम्भ ने एक विशिष्ट राक्षस रक्तबीज को लड़ने के लिए भेजा। रक्तबीज को यह वरदान था कि उसके शरीर से जितनी रक्त की बून्दे गिरेंगी उतने ही रक्तबीज और पैदा हो जायेंगे । रक्तबीज को वास्तव में इसका अभिमान होना भी ठीक ही था । वह किसी भी रणभूमि में सहर्ष जाया करता और आज वह उसी हर्ष से देवी से लड़ने निकल पड़ा। देवी को समक्ष देख उसने घोर अट्ठहास किया और तीरों की ऐसी वर्षा की कि देखने वालों को भ्रम होने लगा वास्तव में वर्षा है या तीरों की बौछार। एक दूसरे पर प्रहार का यह क्रम लगातार बहुत समय तक चलता रहा।

अब तक दुर्गा ने रक्तबीज पर जितने प्रहार किये उनसे रक्त बीज के शरीर से जगह-जगह खून बह रहा था तथा उस खून की जितनी बूदें भूमि पर गिरती उतने रक्तबीज और पैदा होते जाते थे। इस प्रकार उत्पन्न अगनित रक्तबीजों ने दुर्गा और उसके सिंह को घेर लिया लेकिन चण्डी और सिंह ने मिलकर युद्ध में उन सब दैत्यों का समूह मार गिराया।

चण्डी काली दुहूँ मिलि कीनो इहै विचार।
मैं हनहौं तूं श्रोण पी अखिल डारहिं मार॥

इस प्रकार जब रक्तबीज के रक्त से बार-२ अनेकों रक्तबीज उत्पन्न होते रहे तो चण्डी ने काली से कहा कि मैं इस महाबलशाली दैत्य पर प्रहार करूँ तो तुम इसके खून को जमीन पर न गिरने दो। तब काली ने अपने रौद्र रूप में हाथ में खप्पर लेकर रक्तबीज से गिरने वाली खून की बूंदों को खप्पर में भर-भरकर पिया। माता ने रक्त-बीज को जब अन्तिम बार त्रिशूल से मारा तो काली माँ ने उसका सारा खून पी लिया। इस प्रकार शक्ति ने उसका सर्वनाश किया।

चण्डी दियो बिडार शोण पान काली कियो।
क्षण मंह डारयो मार शोण बिन्दु दानव महा॥

निशुम्भ वध—

तुच्छ बचे भजके रण छाड़िके शुम्भ निशुम्भ पै जाय पुकारे।
शोणितबीज हना दुहू ने मिलि और महाभट मारि विदारे।।

जो मामूली राक्षस बच रहे उन्होंने जाकर अपने स्वामी शुम्भ और निशुम्भ से श्रोणित विन्दु के मारे जाने की खबर दी यह सुनकर निशुम्भ हाथ में खड्ग संभालते हुए बोला— क्या रक्तबीज भी चण्डी से ऐसा मारा गया जैसे जंगल का सिंह छोटे जानवरों को मार डालता है।

कोप में भरकर शुम्भ-निशुम्भ ने युद्ध की ऐसी दुन्दुभी बजाई कि दसों दिशायें गूंज उठीं। रणनीति के अनुसार अपनी सेनाओं को अनेक प्रकार से सजाकर ध्वजा फहराता हुआ निशुम्भ ऐसे चला मानों कोई पहाड़ ही उठकर चल दिया हो। हर ओर धूल ही धूल उड़ने लगी। उधर चण्डी के कानों में भी एक नये दैत्य के आगमन की भनक पड़ी। चण्डी ने भी पहाड़ से उतरकर शत्रु को ललकारते हुए महान कोलाहल किया। देवी को देखते ही निशुम्भ ने एक बहुत बड़ा धनुष तान लिया उसकी टंकार ही ऐसी बजी कि मानो बादल गरज रहे हो। ऐसे भयंकर दैत्य को देखकर देवी ने अपनी सभी शक्तियों को अपने में समा लिया। देवी और निमुम्भ का घोर संग्राम हुआ। शत्रुओं

के सिर ऐसे गिर रहे थे जैसे शहतूत के वृक्ष को हिलाने से शहतूत गिरते हैं। पूर्ण क्रोध में भरकर जब चण्डी ने निशुम्भ पर तीर मारा तो उसका सिर भी दो टुकड़े होकर गिरा और रणभूमि में अँधेरा छा गया।

शुम्भ वध—

निशुम्भ का सिर जब इस प्रकार मैदान में गिर गया तो एक दैत्य अपना धनुषवाण छोड़कर दौड़कर शुम्भ के पास गया और उसे उसके भाई के मारे जाने की सूचना दी।

शुम्भ निशुम्भ हन्यो सुनिकै वर वीर के चित्त न क्षोभ समायो।
साजि चढ़ा गज वाजि समाज औ दानव पुन्ज लिए रण आयो॥
भूमि भयानक लोथ परी लखि शोण समूह महा विसमायो।
मानहु सारसुती उमडी जल सागर के मिलबै कहँ धायो॥

अपने प्यारे भाई के मारे जाने पर शुम्भ के क्रोध का ठिकाना न रहा। वह बिना एक पल भी व्यतीत किये मातेश्वरी से बदला लेने के लिए दौड़ा। अभिमान में भर मातेश्वरी से बोला—तूने काली समेत अन्य शक्तियों की सहायता लेकर मेरी इतनी बड़ी सेना और मेरे भाई को मारा है, अब देख मैं तुझ से अकेले ही बदला लूंगा।

मातेश्वरी ने कहा—'मेरे साथ अन्य कोई दूसरी शक्ति

नहीं है । समय आने पर मेरी शक्ति अलग-२ रूप धारण कर मेरे ही शरीर से निकलती है और फिर मुझमें ही प्रवेश कर जाती है । यह देख अब मैं तुझसे लड़ने के लिए अकेली ही खड़ी हूँ, तैयार हो जा !'

युद्ध में शुम्भ के भी प्राण निकल गये और सब देवताओं ने मिलकर फिर माता का जैकारा बोला ।

देहि अशीश सभै सुरनारी सुधारि कै आरति दीप जगायो ।
फूल सुगन्ध सु अक्षत दक्षिण यक्षन जीत को गीत सुगायो ।
धूप जागायकि शंख बजायकि शीश निवायकि बैन सुनायो ।
हे जगमाय सदा सुखदाय ! तैं शुम्भ को घाय बड़ो यश पायो ।।

इस लेख में दिए गए सब कविता उद्धरण श्री गुरु-गोविन्द सिंह कृत 'चण्डी चरित्र' से लिए गए हैं । कथा व पृष्ठभूमि 'दुर्गा-सप्तशति' तथा 'वाराह-पुराण' पर आधारित है ।

श्री वैष्णव देवी दरबार यात्रा
(इतिहास और पथ प्रदर्शिका)

वैष्णवी माता कटरा से लगभग १४.५ किलोमीटर ऊपर समुद्र सतह से ५२०० फीट की ऊँचाई पर त्रिकूट पर्वत की घाटी की सुन्दर गुफा में महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती के पिण्डी रूप में निवास कर भक्तों की मनोकामना पूर्ण कर रही है ।

यात्रा का समय

सामान्य रूप से श्रद्धालु यात्री-गण पूरे वर्ष भर माता वैष्णो के दर्शन के लिए आते हैं । परन्तु आश्विन व चैत्र मास की नवदुर्गाओं या नवरात्रों में यात्रा करने का विशेष महातम माना गया है । जनवरी एवं फरवरी में हिमपात होने से मार्ग कठिन हो जाता है । अतः इन दो महीनों में छोटे बच्चों व बूढ़ों को साथ लेकर यात्रा करना उचित नहीं रहता । नव युवकों के लिए तो सभी मौसम

उपयुक्त हैं। चैत्र व आश्विन के नवरात्रों (मार्च-सितम्बर) में सपरिवार यात्रा बड़ी सुविधा से की जा सकती है। इन दिनों मौसम भी सुहावना हो जाता है।

यातायात

(१) जम्मू तक यात्री देश के बिभिन्न भागों से बस या रेल द्वारा पहुँचते हैं। जम्मू से कटरा के लिए लगभग हर आधे घण्टे या एक घण्टे बाद बसें चलती रहती हैं। किराया २ रु० ३५ पैसे प्रति व्यक्ति है। डीलक्स बस का किराया ३ रु० ५० पैसे प्रति व्यक्ति है।

(२) जम्मू से कटरा के लिए टैक्सी भी उपलब्ध है। चार व्यक्तियों का टैक्सी भाड़ा ६० रु० हैं।

(३) कटरा से पहाड़ी मार्ग-पैदल शुरू होता है। डांडी, घोड़ा, खच्चर व कुली (पिट्ठू) निर्धारित किराए पर मिल सकते हैं।

कटरा

समुद्र तल से लगभग २५०० फीट की ऊँचाई पर, त्रिकूट पर्वत के चरणों में बसी यह सुन्दर बस्ती श्री वैष्णव देवी यात्रा का आधार-रूप है। कटरा से दरबार तक १४.५

किलोमीटर की दूरी रह जाती है, जो प्रत्येक यात्री को पैदल अथवा घोड़े आदि पर तय करनी होती है। मार्ग में स्थान-२ पर प्याऊ (छबील) आदि लगी हुई हैं। सरकार की ओर से नल का भी प्रबन्ध है। पूरे मार्ग में बिजली के प्रकाश का प्रबन्ध है, फिर भी रात को यात्रा करते समय टार्च आदि रखना आवश्यक है।

कटरा में एक ही लम्बा बाजार है, जहां दैनिक उपयोग व यात्रा सम्बन्धी लगभग सभी वस्तुएँ उपलब्ध हैं। खाने-पीने के लिए कई होटल व ढाबे आदि हैं, उचित मूल्य पर अच्छा खाना मिलता है।

ठहरने के लिए भी कटरा में कोई कठिनाई नहीं है। कई धर्मशालाएँ, होटल व प्राईवेट हाऊस हैं। इसके अतिरिक्त टूरिस्ट विश्राम गृह भी बने हुए हैं। मुख्य धर्मशालाएं—धर्मार्थ सराय, चिन्तामणि ट्रस्ट, दिल्ली वाली सराय, श्रीधर सभा सराय। टूरिस्ट रिसेप्शन सेन्टर में अतिरिक्त सामान आदि भी १० पैसे प्रति नग के हिसाब से जमा किया जा सकता है। कटरा में रघुनाथ मन्दिर व चिन्तामणि मन्दिर दर्शनीय है।

आवश्यक सूचनाएँ—

ॐ वैष्णव देवी दरबार जाने वाले प्रत्येक यात्री के

लिए कटरा से "यात्रा-पर्ची" प्राप्त करना अनिवार्य है। यात्रा पर्ची, बस स्टैंड पर ही स्थित, टूरिस्ट रिसेप्शन सेंटर कटरा में, सुविधा से मिलती है। इसके लिए कोई शुल्क नहीं देना होता। यात्रा पर्ची के बिना यात्रियों को बाण गंगा से वापिस आना पड़ता है। भवन पर पहुंचकर यही पर्ची दिखाकर पवित्र गुफा में दर्शन के लिए नम्बर मिलता है।

🕉 चमड़े के जूते पहन कर पहाड़ी यात्रा नहीं करनी चाहिए। धार्मिक भावना से भी कपड़े अथवा रबड़ के जूते ही उचित हैं। कटरा में कई दुकानों से उचित किराए पर कपड़े के जूते सुविधा से मिल जाते हैं। नये भी खरीद सकते हैं।

🕉 यात्रा सादगी एवं पवित्रता के साथ करें। यात्रा में मद्य,मांस व किसी भी प्रकार का नशा वर्जित है।

🕉 वर्षा-ऋतु में छाता या बरसाती आदि लेना चाहिए। बांस की छड़ी, सूखे मेवे, बिस्कुट, भेंट की सामग्री (नारियल, चोले, चुन्नी, ध्वजा, छत्र, पान-सुपारी आदि), थरमस, चूर्ण, टार्च, कैमरा-दूरबीन (यदि इच्छा हो) साथ ले जाना चाहिए। यह सब वस्तुएँ कटरा में सुविधा से

उचित मूल्य पर मिल जाती हैं। छड़ी कैमरा व टार्च आदि कटरा की दुकानों से किराये पर भी मिलते हैं।

꧁ रेजगारी (कटरा से दरबार तक स्थान-स्थान पर छोटी-छोटी कन्याओं को बांटने तथा मन्दिरों आदि पर चढ़ाने के लिए) साथ रखें। कटरा की दुकानों से रेजगारी मिल जाती है।

꧁ गुफा से निकलने वाले पवित्र जल को प्रसाद रूप में साथ लाने के लिए कोई शीशी या बर्तन साथ ले जावें।

एक ही दिन में पूरी यात्रा न कर सकने वाले यात्री आदि कुमारी नामक स्थान पर विश्राम कर सकते हैं। यह स्थान लगभग आधे रास्ते में है। आदिकुमारी तथा वैष्णोदेवी दरबार दोनों ही स्थानों पर कम्बल, दरी, स्टोव तथा खाना बनाने के बर्तन आदि मूल्य जमा कराने पर निःशुल्क उपयोग के लिए मिल जाते हैं। वस्तुओं को लौटा देने पर जमा किया हुआ धन वापिस मिल जाता है। यह प्रबन्ध धर्मार्थ संस्थाओं की ओर से किया गया है।

वैष्णव माता के अवतार धारण की कथा—

देश में विपरीत परिस्थितियां होने पर, समय-समय

पर महाशक्ति ने अपने भिन्न-भिन्न रूप धारण कर, दुष्टों का नाश व भक्तों की रक्षा की है। देवताओं के एकत्रित तेज समूह से उत्पन्न महाशक्ति ने ही कालान्तर में महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती रूप धारण किए—यह तीनों रूप रज,तम एवं सात्विक गुणों के प्रतीक हैं।

त्रेतायुग में जब इस पृथ्वी पर रावण, कुम्भकर्ण, ताड़का, खर-दूषण आदि दैत्यों ने अत्याचार प्रारम्भ किए, तब महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती तीनों महा-शक्तियों ने धर्म की रक्षा के लिए अपने तेज समूह से एक दिव्य शक्ति को जन्म देने का निश्चय किया। तीनों शक्तियों के स्वरूपों से तेज एकत्रित हुए और संयुक्त होकर एक सुन्दर दिव्य कन्या के रूप में प्रकट हो गए। उस कन्या ने महाशक्तियों से पूछा—आपने मुझे क्यों उत्पन्न किया है? उत्तर मिला कि इस संसार में हमने तुम्हें धर्म की रक्षा एवं प्रचार के लिए प्रकट किया है। अब तुम दक्षिण भारत में रत्नाकरसागर के घर पुत्री बनकर जन्म लो। वहां तुम भगवान विष्णु के अंश से अवतार धारण करो। उसके पश्चात तुम आत्म-प्रेरणा से धर्म की रक्षा एवं प्रचार करोगी।

महाशक्तियों की आज्ञानुसार दिव्य कन्या ने रत्नाकर

सागर के घर में अवतार धारण किया। कन्या का नाम त्रिकुटा रखा गया। बाद में यही कन्या भगवान विष्णु के अंश से उत्पन्न होने के कारण 'वैष्णवी' नाम से भी विख्यात हुई तथा जिस धर्म का प्रचार कन्या ने किया वह वैष्णव धर्म कहलाया। वैष्णव शब्द का अपभ्रंश ही वैष्णो है।

अल्प आयु में ही देवी त्रिकुटा ने अपनी अलौकिक शक्ति से ऋषियों मुनियों और देवताओं को भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया। दिव्य कन्या के दर्शनों के लिए दूर-२ से लोग आने लगे। कुछ समय बाद त्रिकुटा ने अपने पिता से आज्ञा लेकर समुद्र तट पर, भगवान राम के ध्यान में लीन होकर तप किया तथा उनकी प्रतीक्षा करने लगी। जब रावण के श्री सीता जी को हरण करने पर, श्री रामचन्द्र जी वानर सेना के साथ समुद्र तट पर पहुँचे तो उन्होंने वहाँ समाधि में बैठी उस दिव्य कन्या को देखा। श्रीराम उसकी भक्ति देखकर प्रसन्न हुए। भगवान राम के पूछने पर त्रिकुटा ने अपने पिता का परिचय दिया और अपनी घोर तपस्या का कारण भी बताया कि मैंने आपको पति के रूप में प्राप्त करने का संकल्प किया है। यह सुनकर प्रभु बोले—हे सुन्दरी ! मैंने इस अवतार में एक पत्नीव्रती होने का संकल्प किया है। किन्तु त्रिकुटा ने अपने विचार न

बदले । अन्त में भगवान् राम ने कहा कि मैं एक बार तुम्हारी कुटिया पर वेष बदल कर आऊँगा, यदि फिर भी तुमने मुझे पहचान लिया तो मैं तुम्हें पत्नी रूप में ग्रहण कर लूंगा। लंका से अयोध्या लौटते समय भगवान् वृद्ध साधु का रूप धरकर वहाँ गये। कन्या उन्हें पहचान न सकी। भगवान राम ने उसे आश्वासन दिया कि कलयुग में कल्की अवतार के समय तुम मेरी सहचरी बनोगी। उस समय तक तुम उत्तर भारत में मणिक पर्वत पर, तीन शिखरों वाले त्रिकूट पर्वत की उस सुरम्य गुफा में, जहाँ तीन महाशक्तियों का निवास है, वहाँ पहुँचकर तपस्या में लीन हो जाओ। वहाँ पर तुम अमर हो जाओगी। नल, नील, हनुमान, जामवन्त आदि लांगुर वीर तुम्हारे प्रहरी होंगे। समस्त भारत में तुम्हारी महिमा फैलेगी और वैष्णव देवी नाम से तुम्हारी प्रसिद्धि होगी।

विश्वास किया जाता है कि तभी से रत्नाकर सागर की कुवांरी कन्या–वैष्णवी, जो देवताओं के पुण्य आशीर्वाद से प्राप्त हुई, रामावतार के समय त्रेता युग से ही इस सुन्दर गुफा में विराजमान है और तपस्या में लीन है। जिसके विषय में प्राचीन कथाओं से आधार लिया जा सकता है···युग बदलते गये, माता अपनी लीलाएं समय-

समय पर दिखलातीं आईं और कितनी ही अन्य कथाओं का जन्म हुआ। माता ने अपनी लीला इन स्थानों पर विशेष रूप से की जिस कारण इसे महत्वपूर्ण माना गया। कलयुग में इसी कथा का प्रचार अधिक हुआ है। प्रमुख लीला-स्थल और इतिहास इस प्रकार है —

भूमिका मन्दिर व भक्त श्रीधर को दर्शन—

यहीं से माता वैष्णव देवी की विशेष भूमिका बंधती है। कटरा से लगभग २ किलोमीटर की दूरी पर हन्साली नामक ग्राम में यह मन्दिर है। यहां थोड़ी सी नई बस्ती है। कहा जाता है कि लगभग ७०० वर्ष पूर्व माता के परम भक्त श्रीधर जी हुए हैं जो इसी ग्राम के निवासी थे। वे नित्य नियम से कन्या पूजन किया करते थे। सन्तान न होने के कारण वह दुःखी रहा करते। श्रीधर जी की सच्ची उपासना और दृढ़ विश्वास देखकर मां वैष्णो को स्वयं एक दिन कन्या रूप धारण करके आना पड़ा। भक्त जी कन्या पूजन की तैयारी कर रहे थे, छोटी छोटी कन्याएं उपस्थित थीं। उन्हीं में जगन्माता भी कन्या बनकर आ गयी। नियम के अनुसार पांव धोकर भोजन परोसते समय श्रीधर जी की दृष्टि उस महा दिव्य रूप कन्या पर पड़ी। भक्त जी विस्मय में डूब गये क्योंकि यह कन्या उन्होंने

कभी देखी न थी और न ही उनके गांव की प्रतीत होती थी। अन्य सब कन्याएं तो दक्षिणा लेने पर चली गई पर यह दिव्य रूपा वहीं बैठी रही। श्रीधर जी उससे कुछ प्रश्न करने ही वाले थे कि कन्या रूपी महाशक्ति स्वयं ही बोली 'मैं तुम्हारे पास एक काम से आई हूँ।' छोटी सी कन्या के मुंह से ऐसी विचित्र बात सुनकर भक्त जी बहुत हैरान हुए! कन्या ने कहा कि आप अपने गांव में और आस पास यह संदेश दे आओ कि कल दोपहर आपके यहां महान् भंडारे का आयोजन है। इतना कह कर वह कन्या वहां से लुप्त हो गयी।
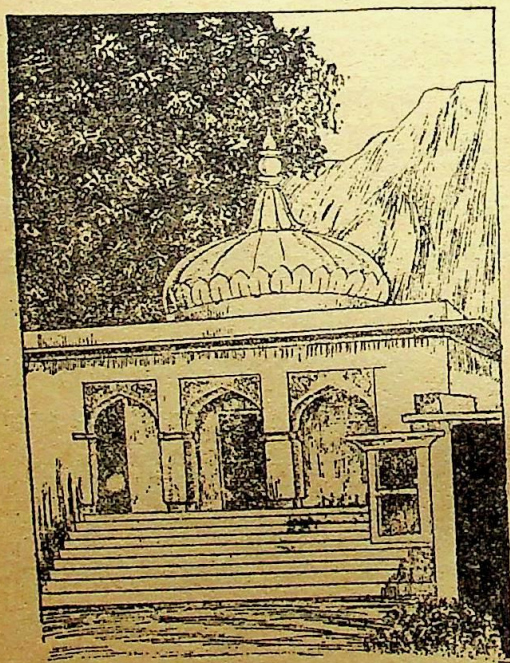
श्रीधर जी विचारों में डूब गए!

आखिर यह कन्या कौन थी?

हो न हो यह जरूर कोई शक्ति थी, परन्तु भण्डारे वाली समस्या से श्रीधर जी परेशान हो गये। अन्त में उन्होंने कन्या की कही बात को ही मुख्य रखा और आस-पास के गांवों में भण्डारे का निमन्त्रण देने निकल पड़े।

श्रीधर जी भण्डारे का संदेश देने एक गांव से दूसरे गांव जा रहे थे तो मार्ग में साधुओं के एक दल को देखकर श्रीधर जी ने उन्हें प्रणाम किया और साथ ही उन्हें होने वाले भण्डारे में पधारने का निमन्त्रण भी दिया। गोरखनाथ ने भक्त जी से उनका नाम पूछा और मुस्करा कर बोले— ब्राह्मण ! तू मुझे, भैरवनाथ और अन्य ३६० चेलों को निमन्त्रण देने में भूल कर रहा है। हमें तो देवराज इन्द्र भी भोजन न दें सके।'

इस पर श्रीधर जी ने उन्हें कन्या के आगमन वाली सब कथा सुनाई। गोरखनाथ ने विचार किया कि ऐसी कौन सी कन्या है जो सबको भण्डारा खिला सकती है ? परीक्षा करके तो देखनी चाहिए। अतः उन्होंने श्रीधर जी से कह दिया—हमें भोजन स्वीकार है, कल समय पर आ जायेंगे।

उस दिन तो श्रीधर जी गांव-गांव घूमते, थके-हारे रात को आकर सो गये। प्रातःकाल होते ही फिर पण्डित जी इस विचार में खो गये कि मुझमें तो इतने बड़े भण्डारे

की सामर्थ्य नहीं, प्रबन्ध कैसे हो ? न मालूम समय कब बीत गया और भीड़ एकत्रित होने लगी। उधर गोरखनाथ और भैरवनाथ जी अपने चेलों सहित आ गये।

श्रीधर जी चिंता में बैठे थे कि अचानक ही दिव्य-रूपी कन्या प्रकट हो गयी और पण्डितजी के सम्मुख आकर बोली—अब सब प्रबन्ध हो जाएगा, उठिए और जोगियों से कहिए कि कुटिया में चलकर भोजन करें। श्रीधर जी उत्साह से उठे और गुरुजी से भोजन के लिए कुटिया में पधारने को कहा तो गुरुजी बोले—'हम चेलों सहित कुटिया में नहीं आ सकते क्योंकि स्थान बहुत छोटा है।' इस पर श्रीधर जी बोले-जोगीनाथ उस कन्या ने ऐसा ही कहा है।

जिस समय जोगी कुटिया में गये तो सबके सब आराम से बैठ गये, फिर भी जगह बच रही। बाहर भी सब लोग बैठे थे। कन्या ने जब अपने एक विचित्र पात्र से सबको भोजन देना आरम्भ किया तो श्रीधर जी प्रसन्न हुए और बाकी सब हैरान !

यह देखकर गोरखनाथ और भैरव ने परस्पर विचार विमर्श किया कि यह कन्या अवश्य ही कोई शक्ति है। यह वास्तव में कौन है, इसका पता लगाना चाहिए। जिस समय कन्या सबको भोजन परोसती हुई भैरवनाथ के पास पहुंची

तो भैरव ने कहा—'कन्या ! तूने सबको उनकी इच्छा का भोजन दिया है लेकिन मेरा मन कुछ और चाहता है।' 'बोलो जोगीनाथ तुम्हें क्या चाहिए ? कन्या का उत्तर था। भैरव ने देवी से मांस और मदिरा माँगी तो कन्या ने जोगी को आदेश के स्वर में कहा—यह एक ब्राह्मण के घर का भण्डारा है। जो कुछ वैष्णव भण्डारे में होता है, वही मिलेगा।

भैरव हठ करने लगा क्योंकि उसने तो कन्या की परीक्षा लेनी थी, लेकिन भैरवनाथ के मन की बात तो वैष्णव देवी पहले ही जान चुकी थी। ज्योंही भैरव ने क्रोध करके कन्या को पकड़ना चाहा वह कन्या रूपी महाशक्ति अन्तर्ध्यान हो गई। भैरव ने भी उसी समय उसकी खोज में पीछा करना आरंभ कर दिया।

दर्शनी दरवाजा—

कटरा से लगभग एक कि० मी० चलने के बाद दर्शनी दरवाजा नामक प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ पर एक ऊँचा पत्थर का दरवाजा बना हुआ है, जहाँ से त्रिकूट पर्वत का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। इसी मार्ग से होकर देवी कन्या त्रिकूट पर्वत की ओर गई थी, स्मृति स्वरूप यह स्थान बना है। भूमिका मन्दिर से भी एक मार्ग दर्शनी दरवाजा तक बना है।

बाण गंगा—

कन्या रूपी महाशक्ति जब वहाँ से लुप्त होकर आगे बढ़ी तो उसके साथ वीर लंगूर भी था। चलते-चलते वीर लंगूर को प्यास लगी तो देवी ने पत्थरों में बाण मारकर गंगा निकाली और उसकी प्यास को तृप्त किया। स्वयं महाशक्ति ने भी उसी गंगा में अपने केश धोकर संवारे तभी से इस नदी को बाण गंगा कहा जाता है। कहीं-कही बाल गंगा भी लिखा गया है।
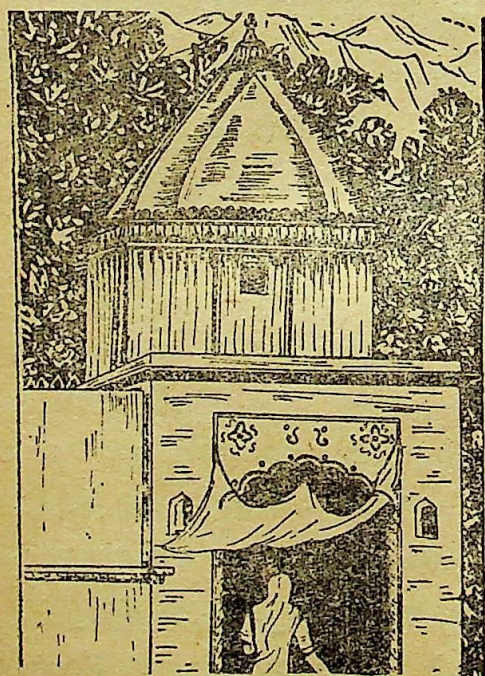
बाण गंगा मंदिर

यह स्थान कटरा से लगभग दो किलोमीटर दूर समुद्र-तल से लगभग २८०० फीट की

ऊँचाई पर त्रिकूट पर्वत की ओर है। जो लोग देवी के दर्शन करने आते हैं, बाण गंगा में स्नान करते हैं। इस क्षेत्र में यह भागीरथी गंगा की तरह ही पवित्र मानी जाती है। एक पुल पार करके सुन्दर मंदिर भी है। हलवाई और जलपान आदि की छोटी-२ दुकाने हैं। त्रिकूट पर्वत के चरणों में स्थित यह स्थान बहुत रमणीक है।

बाण गंगा से चरण पादुका की चढ़ाई के लिए पक्की पौड़ियाँ (सीढ़ियाँ) हैं। साथ ही दूसरी ओर एक पहाड़ी पगडण्डी अर्थात् कच्चा पैदल मार्ग है, इस मार्ग से खच्चर घोड़े भी जाते हैं। यह रास्ता घुमावदार व लम्बा है। सीढ़ियों वाला मार्ग छोटा व सीधा चढ़ाई का है। मार्ग में कई छोटे-२ मन्दिर व साधु महात्माओं के डेरे हैं। काली माता का मन्दिर विशेष दर्शनीय है।

चरण पादुका—

इस स्थान पर रुक कर महाशक्ति देवी ने पीछे की ओर देखा था कि भैरव जोगी आ रहा है या नहीं। रुकने से इस स्थान पर माता के चरण-चिन्ह बन गए, इसी कारण इस स्थान को चरण पादुका पुकारा जाता है।

मन्दिर चरण पादुका

बाण गंगा से यह स्थान १.५ किलोमीटर की दूरी पर, समुद्र तल से ३३८० फीट की ऊँचाई पर स्थित है। एक मन्दिर, चाय, फल आदि की दुकानें हैं। वैष्णो देवी यात्रा में यह दूसरा पड़ाव है।
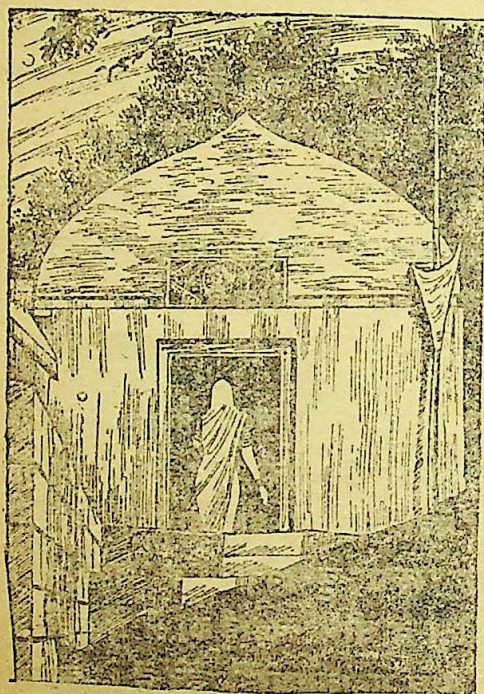
आदिकुमारी और गर्भजून गुफा—

चरणपादुका से काफी दूर चलकर वैष्णवी कन्या ने सामने एक गुफा के पास तपस्वी साधु को देखकर उसे अपनी दिव्य झलक दिखाई और कहा—हे तपस्वी ! मैं यहाँ कुछ समय आराम करूँगी, कोई मेरे विषय में पूछे तो कुछ न बताना। यह कहकर शक्ति गुफा में चली गई और

जिस प्रकार बालक माता के गर्भ में नौ महीने तक रहता है उसी प्रकार कन्या गुफा में नौ महीने तक तपस्या में लीन रही। उधर भैरव कन्या की खोज करता हुआ यहाँ तक आ पहुँचा। उसने तपस्वी से पूछा-क्या तुमने किसी कन्या को इधर से जाते देखा है ? यह सुनकर तपी ने भैरव से कहा- जिसे तू साधारण नारी समझता है वह तो महाशक्ति है और आदि-कुमारी है (अर्थात् जब से सृष्टि की रचना हुई तभी से उसने कौमार्य-व्रत धारण किया)। जा, यहाँ से चला जा! भैरव सुनकर क्रोधित हुआ और बोला कि मैं तो ढूँढकर ही दम लूंगा। भैरव ने गुफा में प्रवेश किया। गुफा में बैठी जगमाता यह सब देख रही थी।

आदि कुमारी मंदिर
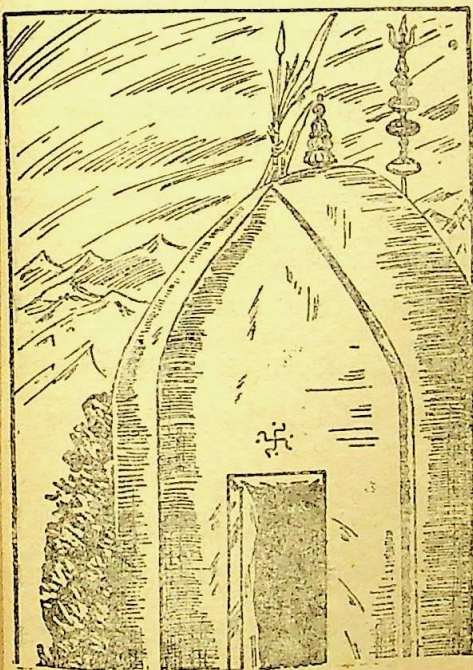
माता ने अपनी शक्ति से त्रिशूल द्वारा गुफा के पीछे से दूसरा मार्ग बनाया और बाहर निकल गई। इसलिए इस गुफा को गर्भ जून गुफा और स्थान को आदिकुमारी कहा जाता है। शक्ति आगे बढ़ी, भैरव पीछा करता रहा।

चरण पादुका से यह स्थान ४.५ किलोमीटर तथा समुद्रतल से ऊँचाई ४७८० फीट है। यहां एक पक्का तालाब है। भगवती वैष्णो का आदिकुमारी रूप में मन्दिर है। प्राकृतिक सौन्दर्य चारों ओर बिखरा पड़ा है। ठहरने के लिए बड़ी धर्मशाला है। बिस्तर, दरी व कम्बल आदि निःशुल्क धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से दिए जाते हैं। जो यात्री शेष यात्रा दूसरे दिन करना चाहें, वह रात भर यहां विश्राम कर सकते हैं। जलपान के लिए ३-४ दुकानें हैं।

हाथी मत्था—

आदिकुमारी से आगे क्रमशः पहाड़ी यात्रा सीधी खड़ी चढ़ाई के रूप में प्रारम्भ हो जाती है। इसी कारण इसे हाथी मत्था के समान माना गया है। सीढ़ियों वाले रास्ते की अपेक्षा घुमावदार पहाड़ी पगडण्डी से जाने में चढ़ाई कम मालूम देती है। समुद्र तल से ऊँचाई ६५०० फीट के लगभग है।

सांझी छत—

आदिकुमारी से यह स्थान साढ़े चार किलोमीटर तथा समुद्रतल से लगभग ७२०० फीट है। यहां से भैरव मन्दिर तक छोटा रास्ता गया है। चाय की दुकान व ठन्डे जल की प्याऊ है।

सामान्यतया दरबार जाने वाले यात्री हाथी मत्था से आगे सांझी छत की ओर न जाकर, नये रास्ते से दिल्ली वाली छबील की ओर चले जाते हैं, चूंकि भैरव मंदिर के अन्दर दर्शन करने का विधान लौटती बार है। इस प्रकार दिल्ली वाली छबील से होकर जाने में छोटा रास्ता व कम चढ़ाई पड़ती है। लगभग दो कि०मी० दूरी कम हो जाती है। वापसी में भैरव मन्दिर के दर्शन किए जा सकते हैं।

भैरव मन्दिर का इतिहास—

देवी कन्या आगे बढ़ती रही—भैरव पीछा करता रहा। देवी ने भैरव को आदेश दिया—जोगी तुम वापिस चले जाओ! किन्तु भैरव न माना। चाहती तो महामाया सब कुछ कर सकती थी, परन्तु भैरव की जिज्ञासा भी सच्ची थी। अन्त में देवी त्रिकूट पर्वत की सुन्दर गुफा तक पहुँची। गुफा के द्वार पर उसने वीर लंगूर को प्रहरी बनाकर खड़ा कर दिया और भैरव को अन्दर आने से रोकने के लिए कहा।

कन्या गुफा में प्रवेश कर गई तो भैरव भी घुसने लगा । वी
लंगूर के साथ भैरव का युद्ध हुआ । वीर लंगूर परास्त हो
लगा । फिर स्वयं शक्ति ने चण्डी रूप धारण कर भैरव क
वध कर दिया । धड़ वहीं गुफा के पास तथा सिर भैर
घाटी में जा गिरा ।

सिर धड़ से अलग होने पर भैरव की आवाज आई-
हे आदि शक्ति ! कल्याणकारिणी मां ! मुझे मरने क
कोई दु:ख नहीं, क्योंकि मेरी मृत्यु जगत रचयिता मां
हाथों हुई है । सो हे मातेश्वरी, मुझे क्षमा कर देना ।
तुम्हारे इस रूप से अपरिचित था । मां अगर तूने मुझे क्षम
न किया तो आने वाला युग मुझे पापी की दृष्टि से देखेग
और लोग मेरे नाम से घृणा करेंगे । 'माता न हो कुमात
भैरव के मुख से बारम्बार मां शब्द सुनकर जगकल्याण
मातेश्वरी ने उसे वरदान दिया कि मेरी पूजा के बाद तेर
भी पूजा होगी तथा तू मोक्ष का अधिकारी होगा । मे
श्रद्धालु मेरे दर्शनों के पश्चात् तेरे दर्शन किया करेंगे । ते
स्थान का दर्शन करने वालों की भी मनोकामना पूर्ण होगी
इसी कथा के अनुसार यात्री दरबार के दर्शनों के बा
वापसी में भैरों मन्दिर में दर्शन के लिए जाते हैं । जि
स्थान पर भैरव का सिर गिरा था, उसी जगह भैर

मन्दिर का निर्माण हुआ।

सांझी छत से भैरव मन्दिर १.५ किलोमीटर तथा समुद्रतल से ६५८३ फीट की ऊँचाई पर है। भैरव बाबा भक्तों की सब इच्छाओं को पूर्ण करते हुए यहां विराजमान हैं। आस-पास चाय व फल आदि की दो-तीन दुकानें हैं।
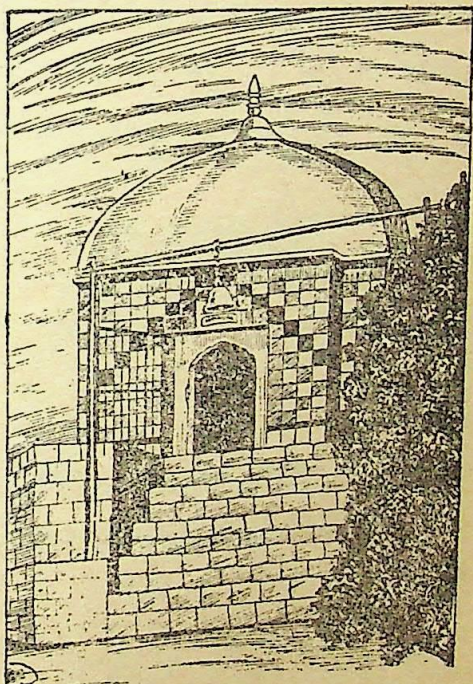
भैरव मन्दिर

दरबार के दर्शन—

उधर भक्त श्रीधर जी को कन्या के अचानक चले जाने से अत्यधिक बेचैनी थी। उन्होंने खाना-पीना भी त्याग दिया था। परन्तु माता तो अपने भक्तों के दिल को जानती है।

अतएव एक रात स्वप्न में वैष्णो मां नें श्रीधर जी को दर्शन दिए और अपने धाम का दर्शन भी कराया। स्वप्न में ही भक्त जी ने माता के साथ सम्पूर्ण यात्रा की। प्रातःकाल श्रीधर जी उठे तो बहुत प्रसन्न थे। स्वप्न में देखे हुए स्थानों से उनका हृदय अब तक पुलकित था।

सुन्दर गुफा का प्रवेश द्वार
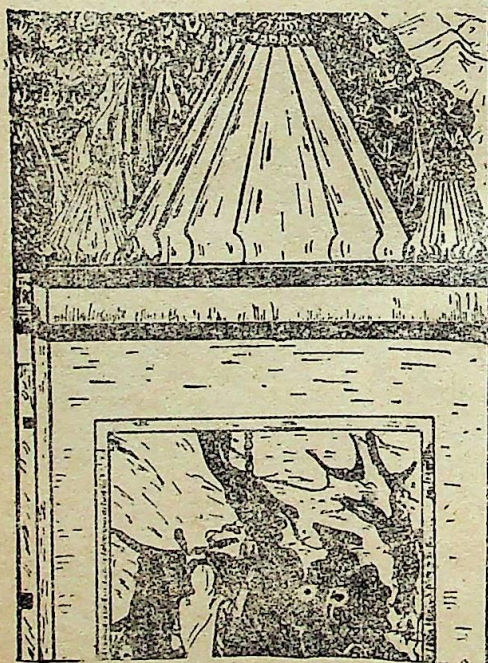
उसी दिन से पण्डित जी वैष्णो देवी के साक्षात् दरबार की खोज करने लगे। एक दिन स्वप्न में देखे अनुसार चलते-२ गुफा का द्वार देख लिया और उसमें प्रवेश करके माता के दरबार के साक्षात् दर्शन कर के जीवन सफल बना लिया। श्रीधर जी ने हाथ जोड़कर जगदम्बे की आराधना की। माता

ने उन्हें चार पुत्रों का वरदान दिया और कहा कि तुम्हारा वंश मेरी पूजा करता रहेगा, सुख-शान्ति की प्राप्ति होगी। आज तक उसका वंश मां की पूजा करता आ रहा है।

इसके बाद श्री धर जी ने गुफा का प्रचार किया। भक्तों की मनोकामनाएं पूर्ण होती रहीं। प्रचार बढ़ता रहा। हजारों, लाखों यात्री प्रतिवर्ष वैष्णों देवी के दर्शनों के लिए आने लगे।

त्रिकूट पर्वत के आंचल में दरबार माता वैष्णो, भैरव मन्दिर से २.५ किलोमीटर दूरी पर स्थित है। समुद्र तल से ऊंचाई ५२०० फीट है। दरबार में प्रवेश करने से पूर्व प्रत्येक यात्री को अपना नाम लिखवा कर टोकन लेना पड़ता है, जिस पर यात्री संख्या लिखी रहती है। यह टोकन कटरा से प्राप्त यात्री-पर्ची देखकर दिया जाता है। पवित्र गुफा में प्रवेश करते समय इसी यात्री.संख्या के अनुसार अनुमति मिलती है।

दरबार में प्रवेश करते ही दाएं हाथ पर श्री धर सभा द्वारा नवनिर्मित विशाल भवन है, जिसमें कई हजार यात्री एक साथ ठहर सकते हैं। थोड़ा आगे चलकर बाईं ओर रावलपिण्डी सभा का कई मंजिला भवन है। इसके अतिरिक्त महाराज रणवीर सिंह द्वारा निर्मित एक विशाल

भवन है, जिसमें धर्मार्थ ट्रस्ट का कार्यालय एवं भण्डार भी है। यहाँ लगभग बीस रुपए अमानत रूप में रखकर दो कम्बल तथा एक दरी मिल जाती है। इसी प्रकार लालटेन एवं खाना बनाने के बर्तन, स्टोव आदि भी यात्रियों को मिल सकते हैं। किसी भी प्रकार से परेशानी नहीं उठानी पड़ती। खाने-पीने के लिए बड़ा भोजनालय, पूजन की सामग्री, चाय एवं हलवा-पूड़ी की दुकानें लगभग चौबीस घण्टे ही खुली रहती हैं। इसके अतिरिक्त प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, पोस्ट आफिस, टेलीफोन व्यवस्था एवं पुलिस सहायता भी उपलब्ध है।

गुफा के अन्दर पिण्डी-दर्शन

पवित्र गुफा में प्रवेश करने से पूर्व स्नान करना चाहिए। इसके लिए भवन के नीचे एवं बाजार के अन्त में स्थान बना हुआ है। पुरुषों एवं महिलाओं के स्नान के लिए अलग-अलग प्रबन्ध है। स्नान के लिए पवित्र गुफा में से आने वाली चरण-गंगा की जल धारा गिरती है। इसके पश्चात् टोकन पर मिली संख्या से क्रमानुसार यात्री पंक्तिबद्ध होकर बैठ जाते हैं। पवित्र गुफा के अन्दर चमड़े की वस्तु एवं बीड़ी-सिगरेट आदि ले जाना वर्जित है।

गुफा का प्रवेश द्वार काफी संकरा (तंग) है। लगभग दो गज तक लेटकर या काफी झुक कर आगे बढ़ना पड़ता है, तत्पश्चात् लगभग १२ गज लम्बी गुफा में पत्थर की शिला के नीचे उतर कर, कमर झुकाकर धीरे-धीरे आगे चलना होता है। गुफा के अन्दर सीधे खड़ा नहीं हुआ जा सकता। गुफा के अन्दर जेनेरेटर द्वारा प्राप्त विद्युत प्रकाश का प्रबन्ध है, फिर भी यात्री टार्च ले जावें तो अच्छा रहता है। गुफा के अन्दर टखनों की ऊँचाई तक शुद्ध एवं शीतल जल प्रवाहित होता रहता है, जिसे चरण गंगा कहते हैं।
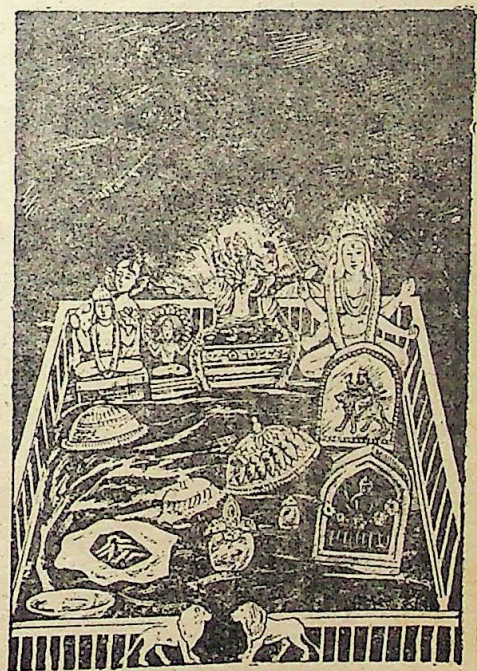
गुफा में पिंडी दर्शन

गुफा के

अन्त में जिस स्थान पर पवित्र पिण्डियों के दर्शन किए जाते हैं, वहां एक साथ पांच-छः व्यक्ति ही बैठ सकते हैं। सीधे खड़ा होना कठिन है। यहां भगवती वैष्णो मां के दर्शन तीन भव्य पिण्डियों के रूप में होते हैं—महाकाली, महालक्ष्मी, एवं महासरस्वती। पिण्डियों के पीछे कुछ श्रद्धलु भक्तों एवं जम्मू के भूतपूर्व नरेशों द्वारा स्थापित मूर्तियाँ एवं यन्त्र इत्यादि हैं। पिण्डियों के पास माता की अखण्ड ज्योति प्रज्जवलित है। प्रातः एवं सायं, दोनों समय पिण्डियों का स्नान, शृङ्गार, पूजन एवं आरती होती है।

यात्री लोग भेंट अर्पित करने के पश्चात् प्रसाद लेकर बाहर आते हैं। विश्वास किया जाता है कि इसी स्थान पर त्रेतायुग से माता वैष्णो तपस्या में लीन हैं और कलयुग में कल्की अवतार की प्रतीक्षा कर रही है। गुफा में सर्वत्र उसी का वास है। वैसे कुछ लोग तीन पिण्डियों में से मध्य वाली पिण्डी को ही माता वैष्णो कहते हैं।

बाहर आने पर कन्या-पूजन करके उन्हें पूड़ी-हलवा आदि देने का रिवाज है। पवित्र दर्शनों का पुण्य लूटकर यात्री लोग माँ की जय-जयकार करते हुए वापिस कटरा के लिए प्रस्थान करते हैं।

सूर्य कुण्ड—

वैष्णो देवी की गुफा के ठीक ऊपर, वैष्णो-दरबार से लगभग ६ किलोमीटर की दूरी पर सूर्यकुण्ड नामक एक पवित्र स्थान है। इस स्थान से सूर्योदय का सुन्दर दृश्य दिखलाई देता है।

रसायन गुफा—

वैष्णो माता के चरणों से जो निर्मल जलधारा बहती है, उसी चरण-गंगा के किनारे-किनारे इस गुफा के लिए मार्ग जाता है। इस गुफा में भगवती के दर्शनों के अतिरिक्त भगवान् विष्णु, राम-सीता, राधा कृष्ण, शालिग्राम आदि अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियां हैं। यह स्थान वैष्णो दरबार से लगभग तीन किलोमीटर दूर है। रसायन गुफा से झिड़ी नामक स्थान के लिए भी एक रास्ता जाता है। गुफा में महात्मा लोग सेवा-पूजा कार्य करते हैं।

प्रमुख दूरियों एवं ऊंचाई के लिए सारिणी—

स्थान काम	परस्पर दूरी	समुद्र तल से ऊँचाई
कटरा	—	२५०० फीट
दर्शशनी दरवाजा	१ कि. मी.	२७०० ,,
बाण गंगा	१ कि. मी.	२८०० ,,
चरण पादुका	१.५ कि. मी.	३३८० ,,
आदिकुमारी	४.५ कि. मी.	४७८० ,,
हाथी मत्था	२.५ कि. मी.	६५०० ,,
सांझी छत	२.० कि. मी.	७२०० ,,
भैरव मन्दिर	१.५ कि. मी.	६५८३ ,,
वैष्णो भवन	२.५ कि. मी.	५२०० ,,

नोट—हाथी मत्था से आगे दिल्ली वाली छबील होकर एक नया छोटा मार्ग भी गया है : अधिकतर यात्री इसी मार्ग से दरबार जाते हैं। इस प्रकार लगभग २ किलोमीटर दूरी कम रह जाती है। तथा काफी चढ़ाई भी कम हो जाती है। भैरव मन्दिर के दर्शन वापिसी में किए जाते हैं। कटरा से वैष्णव देवी दरबार तक (दिल्ली वाली छबील होकर) कुल दूरी १४.५ किलोमीटर रह जाती है।

माता वैष्णो के दरबार में दोनों समय निम्न आरती द्वारा पूजन किया जाता है।

कैसी यह देर लगाई है दुर्गे। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
भव सागर में गिरा पड़ा हूँ। काम आदि ग्रह में घिरा पड़ा हूँ॥
मोह आदि जाल में जकड़ा पड़ा हूँ। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
न मुझमें बल है न मुझमें विद्या। न मुझमें भक्ति न मुझमें शक्ति॥
शरण तुम्हारी गिरा पड़ा हूँ। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
न कोई मेरा कुटुम्ब साथी। ना ही मेरा शरीर साथी॥
चरण कमल की नौका बनाकर। मैं पार हूँगा खुशी मनाकर॥
यमदूतों को मार भगाकर। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
आपही उबारो पकड़के बाहीं। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
सदा ही तेरे गुणों को गाऊँ। सना ही तेरे स्वरूप को ध्याऊँ॥
नित प्रति तेरे गुणों को गाऊँ। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
न मैं किसी का न कोई मेरा। छाया है चारों तरफ अन्धेरा॥
पकड़के ज्योति दिखा दो रस्ता। हे मात मेरी हे मात मेरी॥
शरण में पड़े हैं हम तुम्हारी। करो यह नैया पार हमारी॥
कैसी यह देरी लगाई है दुर्गे। हे मात मेरी हे मात मेरी॥

आरती श्री वैष्णव देवी जी की

सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी तेरा पार न पाया।
पान सुपारी ध्वजा नारियल ले तेरी भेंट चढ़ाया॥
सुआ चोली तेरे अंग विराजे केसर तिलक लगाया।
ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शंकर ध्यान लगाया॥
सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी···

राजा भैंरों चंवर डुलावे, लंगूर वीर का पहरा।
ऊंचे पर्वत भवन है मां का झंडा लाल सुनहरा॥
सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी···

सुन्दर गुफा है मात तुम्हारी शीश पै छत्र विराजे।
गंगा बहे चरणों में, मधुर घंटा ध्वनि बाजे॥
सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी···

जो जन निश्चय करे माता तेरे द्वार है आवे।
मुंह मंगिया मुरादां पाके, जन्म सफल हो जावे॥
सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी···

दन्त कथाएँ और सम्बन्धित अन्य इतिहास

ध्यानू भक्त की कथा व नारियल की भेंट—

जिन दिनों भारत में मुगल सम्राट अकबर का शासन था, उन्हीं दिनों की यह घटना है। नदोन ग्राम निवासी माता का एक सेवक (ध्यानू भक्त) एक हजार यात्रियों सहित माता के दर्शन के लिए जा रहा था। इतना बड़ा दल देखकर बादशाह के सिपाहियों ने चांदनी चौक दिल्ली में उन्हें रोक लिया और अकबर के दरबार में ले जाकर ध्यानू भक्त को पेश किया।

बादशाह ने पूछा—तुम इतने आदमियों को साथ लेकर कहां जा रहे हो?

ध्यानू ने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—मैं ज्वाला माई के दर्शन के लिए जा रहा हूँ। मेरे साथ जो लोग हैं, वह भी माता के भक्त हैं और यात्रा पर जा रहे हैं।

अकबर ने यह सुनकर कहा—यह ज्वाला माई कौन है ? और वहाँ जाने से क्या होगा ?

ध्यानू भक्त ने उत्तर दिया—महाराज ! ज्वाला माई संसार की रचना एवं पालन करने वाली माता हैं। वे भक्तों के सच्चे हृदय से की गई प्रार्थनाएँ स्वीकार करती हैं तथा उनकी सब मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं। उनका प्रताप ऐसा है कि उनके स्थान पर बिना तेल-बत्ती के ज्योति जलती रहती है। हम लोग प्रतिवर्ष उनके दर्शन करने जाते हैं।

अकबर बादशाह बोले—तुम्हारी ज्वाला माई इतनी ताकतवर है, इसका यकीन हमें किस तरह आए ? आखिर तुम माता के भगत हो, अगर कोई करिश्मा हमें दिखाओ तो हम भी मान लेंगे।

ध्यानू ने नम्रता से उत्तर दिया—श्री मान् ! मैं तो माता का एक तुच्छ सेवक हूँ, मैं भला कोई चमत्कार कैसे दिखा सकता हूँ ?

अकबर ने कहा—अगर तुम्हारी बंदगी पाक व सच्ची है तो देवी माता जरूर तुम्हारी इज्जत रखेगी। अगर वह तुम जैसे भक्तों का ख्याल न रखे तो फिर तुम्हारी इबादत का क्या फायदा ? या तो वह देवी ही यकीन के काबिल

नहीं, या तुम्हारी इबादत (भक्ति) ही झूठी है। इम्तिहान के लिए हम तुम्हारे घोड़े की गर्दन अलग किए देते हैं, तुम अपनी देवी से कहकर उसे दुबारा जिन्दा करवा लेना।

इस प्रकार घोड़े की गर्दन काट दी गई।

ध्यानू भक्त ने कोई उपाय न देखकर बादशाह से एक माह की अवधि तक घोड़े के सिर व धड़ को सुरक्षित रखने की प्रार्थना की। अकबर ने ध्यानू भक्त की बात मान ली। यात्रा करने की अनुमति भी मिल गई।

बादशाह से विदा होकर ध्यानू भक्त अपने साथियों सहित माता के दरबार में जा उपस्थित हुआ। स्नान-पूजन आदि करने के उपरान्त रातभर जागरण किया। प्रातःकाल आरती के समय हाथ जोड़कर ध्यानू ने प्रार्थना की—हे मातेश्वरी ! आप अन्तरयामी हैं, बादशाह मेरी भक्ति की परीक्षा ले रहा है, मेरी लाज रखना, मेरे घोड़े को, अपनी कृपा व शक्ति से जीवित कर देना, चमत्कार प्रकट करना, अपने सेवक को कृतार्थ करना। यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार न करेंगी तो मैं भी अपना सिर काटकर आपके चरणों में अर्पित कर दूंगा, क्योंकि लज्जित होकर जीने से मर जाना अधिक अच्छा है। यह मेरी प्रतिज्ञा है। आप उत्तर दें—

कुछ समय तक मौन रहा ।

कोई उत्तर न मिला ।

इसके पश्चात् भक्त ने तलवार से अपना शीश काट कर देवी की भेंट कर दिया ।

उसी समय साक्षात् ज्वाला माई प्रकट हुई और ध्यानू भक्त का सिर धड़ से जुड़ गया, भक्त जीवित हो गया। माता ने भक्त से कहा कि दिल्ली में घोड़े का सिर भी धड़ से जुड़ गया है। चिन्ता छोड़कर दिल्ली पहुँचो। लज्जित होने का कारण निवारण हो गया। और जो कुछ इच्छा हो, वर मांगो—

ध्यानू भक्त के शीश की भेंट

ध्यानू भक्त ने माता के चरणों में शीश झुकाकर प्रणाम कर निवेदन किया--हे जगदम्बे ! आप सर्व शक्तिमान हैं, हम मनुष्य अज्ञानी हैं, भक्ति की विधि भी नहीं जानते। फिर भी विनती करता हूँ कि जगद्माता ! आप अपने भक्तों की इतनी कठिन परीक्षा न लिया करें। प्रत्येक संसारी भक्त आपको शीश-भेंट नहीं दे सकता। कृपा करके, हे मातेश्वरी ! किसी साधारण भेंट से ही अपने भक्तों की मनोकामनाएँ पूर्ण किया करो।

"तथास्तु ! अब से मैं शीश के स्थान पर केवल नारियल की भेंट व सच्चे हृदय से की गई प्रार्थना द्वारा ही मनोकामना पूर्ण करूँगी।" यह कहकर माता अन्तर्ध्यान हो गई।

卐 卐 卐

इधर तो यह घटना घटी, उधर दिल्ली में जब मृत घोड़े के सिर व धड़, माता की कृपा से, अपने आप जुड़ गए तो सब दरबारियों सहित बादशाह अकबर आश्चर्य में डूब गये। बादशाह ने कुछ सिपाहियों को ज्वाला जी भेजा। सिपाहियों ने वापिस आकर अकबर को सूचना दी—वहां जमीन में से रोशनी की लपटें निकल रही हैं, शायद

उन्हीं की ताकत से यह करिश्मा हुआ है। अगर आप हुक्म दें तो इन्हें बन्द करवा दें। इस तरह हिन्दुओं की इबादत की जगह ही खत्म हो जाएगी।

अकबर ने स्वीकृत दे दी। शाही सिपाहियों ने सर्व-प्रथम माता की पवित्र ज्योति के ऊपर लोहे के मोटे-मोटे तवे रखवा दिये। परन्तु दिव्य ज्योति तवे फोड़कर ऊपर निकल आई। इसके पश्चात् एक नहर का बहाव उस ओर मोड़ दिया गया, जिससे नहर का पानी निरन्तर ज्योति के ऊपर गिरता रहे। फिर भी ज्योति का जलना बन्द न हुआ। शाही सिपाहियों ने अकबर को सूचना दे दी। जोतों का जलना बन्द नहीं हो सकता, हमारी सारी कोशिशें नाकाम हो गईं। आप जो मुनासिब हो करें।

इस समाचार को पाकर बादशाह अकबर ने दरबार के विद्वान् ब्राह्मणों से परामर्श किया। ब्राह्मणों ने विचार करके कहा कि आप स्वयं जाकर देवी चमत्कार देखें तथा नियमानुसार भेंट आदि चढ़ाकर देवी माता को प्रसन्न करें। बादशाह के लिए दरबार जाने का नियम यह है कि स्वयं अपने कंधे पर सवामन शुद्ध सोने का छत्र लादकर नंगे पैरों माता के दरबार में जाए। तत्पश्चात् स्तुति आदि करके माता से क्षमा माँग लें।

अकबर ने ब्राह्मणों की बात मान ली। सवामन पक्का सोने का भव्य छत्र तैयार हुआ। फिर वह छत्र अपने कंधे पर रखकर नंगे पैरों बादशाह ज्वाला जी पहुँचे। वहां दिव्य ज्योति के दर्शन किए, मस्तक श्रद्धा से झुक गया, अपने पर पश्चाताप होने लगा। सोने का छत्र कंधे से उतार कर रखने का उपक्रम किया···परन्तु···छत्र गिर कर टूट गया। कहा जाता है कि वह सोने का न रहा, किसी विचित्र धातु का बन गया, जो न लोहा था, न पीतल, न तांबा, न सीसा।

अर्थात् देवी ने भेंट अस्वीकार कर दी।

इस चमत्कार को देखकर अकबर ने अनेक प्रकार से स्तुति करते हुए माता से क्षमा की भीख माँगी और अनेक प्रकार से माता की पूजा आदि करके दिल्ली वापिस लौटा। आते ही अपने सिपाहियों को सभी भक्तों से प्रेम पूर्वक व्यवहार करने का आदेश निकाल दिया।

अकबर बादशाह द्वारा चढ़ाया गया खण्डित छत्र माता के दरबार के बाँई ओर आज भी पड़ा हुआ देखा जा सकता है।

॥ बोलो साचे दरबार की जय ॥

महारानी तारा देवी की कथा—
(माता के जागरण का महात्म्)

माता के जगराते में महारानी तारादेवी की कथा कहने-सुनने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आती है। बिना इस कथा के जागरण को सम्पूर्ण नहीं माना जाता। यद्यपि पुराणों या ऐतिहासिक पुस्तकों में इसका कोई उल्लेख नहीं है, तथापि माता के प्रत्येक जागरण में इसको सम्मिलत करने का परम्परागत विधान है। कथा इस प्रकार है—

महाराज दक्ष की दो पुत्रियां तारादेवी एवं रुक्मन भगवती दुर्गा जी की भक्ति में अटूट विश्वास रखती थीं। दोनों बहनें नियम पूर्वक एकादशी का व्रत किया करती थी तथा माता के जागरण में प्रेम के साथ कीर्तन एवं महात्म् कहा-सुना करती थीं।

एकादशी के दिन एक बार भूल से छोटी बहिन रुक्मन ने मांसाहार कर लिया। जब तारादेवी को पता लगा तो उसे रुक्मन पर बड़ा क्रोध आया और बोली—तू है तो मेरी बहिन, परन्तु मनुष्य देही पाकर भी तूने नीच योनी के प्राणी जैसा कर्म किया है, तू तो छिपकली बनने योग्य है।

बड़ी बहन के मुख से निकले शब्दों को रुक्मन ने शिरोधार्य कर लिया और साथ ही प्रायश्चित का उपाय पूछा । तारा ने कहा—त्याग एवं परोपकार से सब पाप छूट जाते हैं ।

दूसरे जन्म में तारादेवी इन्द्रलोक की अप्सरा बनी और छोटी बहिन रुक्मन छिपकली की योनि में प्रायश्चित का अवसर ढूंढने लगी ।

द्वापर युग में जब पांच पाण्डवों ने अश्वमेघ यज्ञ किया तब उन्होंने दूत भेजकर दुर्वासा ऋषि सहित तेंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण दिया । जब दूत दुर्वासा ऋषि के स्थान पर निमन्त्रण लेकर गया तो दुर्वासा ऋषि बोले—यदि तेंतीस करोड़ देवता उस यज्ञ में भाग लेंगे तो मैं उसमें सम्मिलित नहीं हो सकता । दूत तेंतीस करोड़ देवताओं को निमन्त्रण देकर वापिस पहुँचा और दुर्वासा-ऋषि का वृतांत पाण्डवों को कह सुनाया कि वह सब देवताओं को बुलाने पर नहीं आवेंगे ।

यज्ञ प्रारम्भ हुआ । तेंतीस करोड़ देवता यज्ञ में भाग लेने आए । उन्होंने दुर्वासा ऋषि जी को न देखकर पाण्डवों से पूछा कि ऋषि को क्यों नहीं बुलवाया । इस पर पाण्डवों

ने नम्रता सहित उत्तर दिया कि निमन्त्रण भेजा था, परन्तु वे ग्रहंकार के कारण नहीं ग्राए। यज्ञ में पूजन-हवन ग्रादि निर्विघ्न समाप्त हुए। भोजन के लिए भण्डारे की तैयारी होने लगी।

दुर्वासा ऋषि ने जब देखा कि पाण्डवों ने उनकी उपेक्षा कर दी है तो उन्होंने ग्रत्यन्त क्रोध करके, पक्षी का रूप धारण कया ग्रौर चोंच में सर्प लेकर भण्डारे में फेंक दिया जिसका किसी को कुछ भी पता नहीं चला। वह सर्प खीर की कढ़ाई में गिरकर छिप गया। एक छिपकली (जो पिछले जन्म में तारादेवी की छोटी बहन थी, तथा बहिन के शब्दों को शिरोधार्य कर इस जन्म में छिपकली बनी) सर्प का भण्डारे में गिरना देख रही थी। उसे त्याग व परोपकार की शिक्षा ग्रब तक याद थी। वह भण्डार घर की दीवार पर चिपकी समय की प्रतीक्षा करती रही। कई लोगों के प्राण बचाने हेतु उसने ग्रपने प्राण न्यौछावर कर देने का मन ही मन निश्चय किया। जब खीर भण्डारे में दी जाने वाली थी तो सबकी ग्रांखों के सामने वह छिपकली दीवार से कूदकर कढ़ाई में जा गिरी।

निदान, लोग छिपकली को बुरा-भला कहते हुए खीर के कढ़ाये को खाली करने लगे, उस समय उन्होंने उसमें मरे हुए एक सांप को देखा। ग्रब सबको मालूम हुग्रा कि

छिपकली ने अपने प्राण देकर उन सबके प्राणों की रक्षा की है। इस प्रकार उपस्थित सभी सज्जनों और देवताओं ने उस छिपकली के लिए प्रार्थना की कि उसे सब योनियों में उत्तम मनुष्य जन्म प्राप्त हो तथा अन्त में मोक्ष को प्राप्त करे।

तीसरे जन्म में वह छिपकली राजा 'सपरश' के घर कन्या बनी। दूसरी बहन तारादेवी ने फिर मनुष्य जन्म लेकर तारामती नाम से अयोध्या के प्रतापी राजा हरिश्चन्द्र के साथ विवाह किया।

राजा सपरश ने ज्योतिषियों से कन्या की कुण्डली बनवाई। ज्योतिषियों ने राजा को बताया कि कन्या राजा के लिए हानिकारक सिद्ध होगी, शकुन ठीक नहीं हैं अतः आप इसे मरवा दीजिए। राजा बोला—लड़की को मारने का पाप बहुत बड़ा है। मैं उस पाप का भागी नहीं बन सकता। तब ज्योतिषियों ने विचार करके राय दी—हे राजन ! आप एक लकड़ी के सन्दूक में ऊपर से सोना-चांदी आदि जड़वा दें। फिर उस सन्दूक के भीतर लड़की को बन्द करके नदी में प्रवाहित कर दीजिए। सोना-चांदी जड़ित लकड़ी का सन्दूक अवश्य ही कोई लालच से निकाल लेगा और आपकी कन्या को भी पाल लेगा। आपको किसी

प्रकार का पाप न लगेगा। ऐसा ही किया गया और नदी में बहता हुआ सन्दूक काशी के समीप एक भंगी को दिखाई दिया। वह सन्दूक को नदी से बाहर निकाल लाया। जब खोला तो सोना चांदी के अतिरिक्त अत्यन्त रूपवान कन्या दिखाई दी। उस भंगी के कोई सन्तान नही थी। जब उसने अपनी पत्नी को वह कन्या लाकर दी तो पत्नी की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उसने अपनी सन्तान के समान ही बच्ची को छाती से लगा लिया। भगवती की कृपा से उसके स्तनों में दूध उतर आया। पति-पत्नि दोनों ने प्रेम से कन्या ना नाम 'रुक्को' रख दिया।

जब वह कन्या विवाह योग्य हुई तो भंगी ने उसका विवाह अयोध्या के सजातीय युवक के साथ बड़ी धूम-धाम से किया। इस प्रकार पहले जन्म की रुक्मन, दूसरे जन्म में छिपकली तथा तीसरे जन्म में 'रुक्को' बन गई।

रुक्को की सास महाराजा हरिश्चन्द्र के घर सफाई आदि का काम करने जाया करती थी। एक दिन वह बीमार पड़ गई। निदान रुक्को महाराजा हरिश्चन्द्र के घर काम करने के लिए पहुँच गई। महाराजा की पत्नि तारामती ने जब रुक्को को देखा तो वह अपने पूर्वजन्म के पुण्य से उसे

पहिचान गई। तब तारामती ने रुक्को से कहा—हे बहन ! तुम यहाँ मेरे निकट आकर बैठो। महारानी की बात सुन कर रुक्को बोली——रानी जी ! मैं नीच जाति की भंगिन हूँ, भला मैं आपके पास कैसे बैठ सकती हूँ।

तब तारामती ने कहा—बहिन ! पूर्व जन्म में तुम मेरी सगी बहन थी। एकादशी का व्रत खण्डित करने के कारण तुम्हें छिपकली की योनि में जाना पड़ा। जो होना था सो हो चुका। अब तुम अपने इस जन्म को सुधारने का उपाय करो तथा भगवती वैष्णो माता की सेवा करके अपना जन्म सफल बनाओ। यह सुनकर रुक्की को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने उपाय पूछा। रानी ने बताया कि वैष्णो माता सब मनोरथों को पूरा करने वाली है। जो लोग श्रद्धापूर्वक माता का पूजन व जागरण करते हैं, उनकी सब मनो-कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

रुक्को ने प्रसन्न होकर माता की मनौती करते हुए कहा—हे माता ! यदि आपकी कृपा से मुझे एक पुत्र प्राप्त हो जाय तो मैं भी आपका पूजन व जागरण करवाऊँगी। प्रार्थना को माता ने स्वीकार कर लिया, फलस्वरूप दसवें महीने उसके गर्भ से एक अत्यन्त सुन्दर बालक ने जन्म

लिया। परन्तु दुर्भाग्यवश रुक्को को माता का पूजन-जागरण करने का ध्यान ही न रहा। परिणाम यह हुआ कि जब वह बालक पांच वर्ष का हुआ तो एक दिन उसे तेज बुखार आ गया और दूसरे दिन उसे माता (चेचक) निकल आई। रुक्को दुखी होकर अपने पूर्व जन्म की बहिन तारामती के पास गई और बच्चे की बीमारी का सब वृताँत कह सुनाया। तब तारामती ने कहा—तू जरा ध्यान करके देख कि तुझसे माता के पूजन में कोई भूल तो नहीं हुई। इस पर रुक्को को छह वर्ष पहले की बात का ध्यान आ गया और उसने अपराध स्वीकार कर लिया। उसने फिर मन में निश्चय किया कि बच्चे को आराम आने पर अवश्य जागरण करवाऊँगी।

भगवती की कृपा से बच्चा दूसरे ही दिन ठीक हो गया। तब रुक्को ने देवी मन्दिर में जाकर पण्डित से कहा कि मुझे अपने घर माता का जागरण कराना है, सो आप मंगलवार को मेरे घर पधार कर कृतार्थ करें। पण्डित जी बोले—अरी रुक्को, तू यहीं पांच रुपये दे जा हम तेरे नाम से मन्दिर में ही जागरण करवा देंगे। तू नीच जाती की स्त्री है। इसलिए हम तेरे घर में जाकर देवी का जागरण नहीं कर सकते। रुक्को ने कहा—हे पण्डित जी माता के दरबार में तो ऊँच-नीच का कोई विचार नहीं होता वे तो

सब भक्तों पर समान रूप से कृपा करती हैं। अतः आपको कोई एतराज नहीं होना चाहिए, इस पर पण्डितों ने आपस में विचार करके कहा--यदि महारानी तारामती तुम्हारे जागरण में पधारें तब तो हम भी स्वीकार कर लेंगे।

यह सुनकर रुक्को महारानी के पास गई और सब वृतांत कह सुनाया। तारामती ने जागरण में सम्मिलित होना सहर्ष स्वीकार लिया। जिस समय रुक्को पण्डितों से यह कहने गई कि महारानी जी जागरण में आवेंगीं उस समय सैंन-नाई ने सुन लिया और महाराजा हरिश्चन्द्र को जाकर सूचना दी। राजाने सैंन-नाई से सब बात सुनकर कहा कि तेरी बात झूठी है। महारानी भंगियों के घर जागरण में नहीं जा सकती फिर भी परीक्षा लेने के लिए उसने रात को अपनी उंगली पर थोड़ा चीरा लगा लिया जिससे नींद न आवे। रानी तारामती ने जब यह देखा कि जागरण का समय हो रहा है परन्तु महाराज को नींद नहीं आ रही तो उसने माता वैष्णो से मन ही मन प्रार्थना की कि हे माता ! आप किसी उपाय से राजा को सुलादें ताकि मैं जागरण में सम्मिलित हो सकूं। राजा को नींद आ गई। रानी तारामती रोशनदान से रस्सा बांधकर महल से उतरी और रुक्को के घर जा पहुँची।

उस समय जल्दी के कारण रानी के हाथ से रेशमी रूमाल तथा पांव का एक कंगन रास्ते में ही गिर पड़ा। उधर थोड़ी देर बाद राजा हरिश्चन्द्र की नींद खुल गई। तब वह भी रानी का पता लगाने निकल पड़ा। मार्ग में कंगन व रूमाल उसने देखे और जागरण वाले स्थान पर जा पहुँचा। राजा ने दोनों चीजें रास्ते से उठाकर अपने पास रखलीं और जहां जागरण हो रहा था, वहां एक कोने में चुपचाप बैठकर सब दृश्य देखने लगा।

जब जागरण समाप्त हुआ तो सबने माता की आरती व अरदास की। उसके बाद प्रसाद बांटा गया। रानी तारामती को जब प्रसाद मिला तो उसने झोली में रख लिया। यह देखकर लोगों ने पूछा आपने प्रसाद क्यों नहीं खाया ? यदि आप न खावेंगी तो कोई भी प्रसाद न खाएगा। रानी बोली--तुमने जो प्रसाद दिया वह मैंने महाराज के लिए रख लिया। अब मुझे मेरा प्रसाद दे दो। अबकी बार प्रसाद लेकर तारा ने खा लिया। इसके बाद सब भक्तों ने माता का प्रसाद खाया।

इस प्रकार जागरण समाप्त करके, प्रसाद खाने के पश्चात्, रानी तारामती महल की ओर चली। तब राजा ने आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया और कहा—तूने नीचों के

घर का प्रसाद खाकर अपना धर्म.भ्रष्ट कर लिया है, अब मैं तुझे अपने घर कैसे रखूँ ? तूने तो कुल की मर्यादा व मेरी प्रतिष्ठा का भी कोई ध्यान नहीं रखा। जो प्रसाद तू अपनी झोली में रखकर मेरे लिए लाई है उसे खिलाकर मुझे भी अपवित्र करना चाहती है। ऐसा कहते हुए जब राजा ने झोली की ओर देखा तो भगवती की कृपा से प्रसाद के स्थान पर उसमें चम्पा, गुलाब, गेंदा के फूल, कच्चे चावल और सुपारियां दिखाई दीं। यह चमत्कार देखकर राजा आश्चर्य चकित रह गया। राजा हरिश्चन्द्र रानी तारा को साथ लेकर वापिस महल लौट आए। वहाँ रानी ने ज्वाला मैया की शक्ति से बिना किसी माचिस या चकमक पत्थर की सहायता लिए, राजा को अग्नि प्रज्जवलित करके दिखाई, जिसे देखकर राजा का आश्चर्य और बढ़ गया। राजा के मन में भी देवी के प्रति विश्वास तथा श्रद्धा जाग उठी।

इसके बाद राजा ने रानी से कहा--मैं माता के प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता हूँ। रानी बोली--प्रत्यक्ष दर्शन पाने के लिए बहुत बड़ा त्याग होना चाहिए। यदि आप अपने पुत्र रोहिताश्व की बली दे सकें तो आपको दुर्गा देवी के प्रत्यक्ष दर्शन भी प्राप्त हो सकते हैं। राजा के मन में तो देवी के दर्शन की लगन हो गई थी। राजा ने पुत्र का मोह

त्याग कर रोहिताश्व का सिर देवी को अर्पण कर दिया। ऐसी सच्ची श्रद्धा एवं विश्वास देख दुर्गा माता सिंह पर सवार होकर उसी समय वहां प्रकट हो गई और राजा हरिश्चन्द्र दर्शन करके कृतार्थ हुए। मरा हुआ पुत्र भी जीवित हो गया। चमत्कार देख राजा हरिश्चन्द्र गद्गद हो गए। उन्होंने विधि पूर्वक माता का पूजन करके अपराधों की क्षमा मांगी। सुखी रहने का आशीर्वाद देकर माता अन्तर्ध्यान हो गई।

राजा ने तारा रानी की भक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा—हे तारा ! मैं तुम्हारे आचरण से अति प्रसन्न हूँ। मेरे धन्य भाग, जो तुम मुझे पत्नि रूप में प्राप्त हुई। इसके पश्चात् राजा हरिश्चन्द्र ने रानी तारा देवी की इच्छानुसार अयोध्यापुरी में माता का एक भव्य मन्दिर तैयार करवा दिया। आयु-पर्यन्त सुख भोगने के पश्चात् राजा हरिश्चन्द्र, रानी तारादेवी एवं रुक्मन भंगिन तीनों ही मनुष्य योनि से छूटकर देवलोक को प्राप्त हुए।

माता के जागरण में रानी तारा की इस कथा को जो मनुष्य भक्तिपूर्वक पढ़ता या सुनता है, उसकी सभी मनो-कामनाएँ पूर्ण होती हैं, सुख एवं समृद्धि बढ़ती है, शत्रुओं का नाश एवं सर्व मंगल होता है। इस कथा के बिना जागरण पूरा नहीं माना जाता।

॥ बोल साचे दरबार की जय ॥

देवी के नवरातों की व्रत कथा—

(राजा चन्द्रदेव पर कृपा)

प्राचीन काल में जम्मू के राजा चन्द्रदेव बड़े धर्मात्मा तथा दानी थे, उनकी राजधानी जम्मू.नगर थी। उन्होंने कई मन्दिरों का निर्माण करवाया तथा स्थान-स्थान पर सदाव्रत लगाए। ऐश्वर्य एवं दान आदि में किसी प्रकार की कमी न थी। परन्तु दुर्भाग्य वश उनके कोई सन्तान न थी। रानी धर्मवती भी इसी कारण दुःखी रहा करती थी।

एक बार राजा चन्द्रदेव रानी सहित गंगा स्नान के लिए हरिद्वार गये। वहां उन्होंने महात्मा हंसदेव जी का प्रवचन सुना और प्रभावित हुए। उन्होंनें महात्मा जी से प्रार्थना की कि वह रानी धर्मवती को संतान प्राप्त होने का आशीर्वाद प्रदान करें। महात्मा हंसदेव जी बोले—हे राजन्! आप संतान प्राप्ति के हेतु सर्वोत्तम चण्डी-पाठ सम्पन्न करावें। इसके अतिरिक्त आपके राज्य में त्रिकूट पर्वत की गुफा में भगवती वैष्णवी शक्ति का निवास है। वहां दर्शन एवं पूजन से मनोरथ पूरे होते हैं।

महात्मा हंसदेव जी के वचन हृदय में रखकर राजा चंद्रदेव राजधानी लौटे। फिर उन्होंने विधिपूर्वक चण्डी-पाठ एवं यज्ञ कराया। फलस्वरूप भगवती की कृपा से परम

रूपवती कन्या प्राप्त हुई, जिसका नाम चंद्रभागा रखा गया। कुछ समय बीतने पर अत्यन्त तेजस्वी सुन्दर पुत्र ने भी रानी की कोख से जन्म लिया। राजा-रानी धन्य हो गए।

राजकुमारी युवा हो जाने पर उसका विवाह महेशपुर के राजकुमार शांताकार के साथ किया गया। विवाह में यथाशक्ति दहेज आदि देकर कन्या को विदा किया। इसके कुछ वर्ष उपरांत, राजकुमार चंद्रशील के विवाह पर, राजा ने महात्मा हंसदेव जी को जम्मू पधारने तथा युवराज को आशीर्वाद देने का बहुत आग्रह किया। राजा की प्रार्थना स्वीकार करके सद्‌गुरु हंसदेव जम्मू पधारे। विवाह में भाग लेने के लिए राजकुमारी चंद्रभागा तथा उसका पति शांताकार भी आए हुए थे। महात्मा हंसदेव जी की दृष्टि जब राजकुमारी के मस्तक पर पड़ी तो उन्होंने योगबल से उसका भविष्य जान लिया। राजा चंद्रदेव को एकांत में उन्होंने बता दिया कि लड़की आज से सातवें दिन विधवा हो जाएगी।

महात्मा जी के वचनों को सुनकर राजा एवं रानी दोनों ने उनके चरण पकड़ लिए और सुरक्षा का उपाय पूछा। हंसदेव जी बोले—हे राजन् जब हरिद्वार में आप से पहली

भेंट हुई थी, उस समय मैंने आपको त्रिकूट पर्वत-वासिनी वैष्णव देवी के विषय में बताया था। वह देवी सब संकटों से छुटकारा दिलाने वाली है। यदि आपकी पुत्री उसकी आराधना करे तो कष्ट निवारण होगा। यह सुनकर राजकुमारी चन्द्रभागा ने देवी की आराधना करनी प्रारम्भ की।

हंसदेवजी के वचनानुसार सातवें दिन राजकुमार शांताकार की दुर्घटना होने से मृत्यु हो गई। शोक समाचार चारों ओर फैल गया। राजकुमारी चन्द्रभागा मूर्छित होकर गिर गई। मूर्छा दूर होने पर अत्यन्त विलाप करते हुए प्रतिज्ञा की—माता वैष्णव देवी जब तक मेरे पति को पुनः जीवित न कर दें, मैं अन्न जल ग्रहण न करूँगी। भूखी-प्यासी रह कर अपने प्राण त्याग दूंगी।

नौ दिन तथा नौ रात्रियों तक चन्द्रभागा निरन्तर वैष्णव माता की अराधना में, निराहार रह कर, लगी रही। तपस्या से प्रसन्न होकर दसवें दिन भगवती वैष्णव देवी ने प्रकट होकर दर्शन दिए। शांताकार के मृत शरीर पर अमृत छिड़ककर उसे जीवति कर दिया। चन्द्रभागा ने बारम्बार स्तुति करके प्रार्थना की—हे माता ! आपकी कृपा से मुझे सौभाग्य की प्राप्ति हुई है। अब तो केवल

यही अभिलाषा है कि आप हमारे राज्य में निवास करें तथा अपनी कृपा सदैव बनाए रखें।

इसी कारण से आज भी भारतीय नारियां घर में खेत्री बीजती हैं और नौ दिन व्रत रखकर अपने सुहाग की मंगल कामना करती हैं। इन्हीं दिनों को नवरात्रे कहते हैं। इनमें तीर्थ यात्रा एवं देवी के दर्शनों का विशेष फल माना जाता है।

श्री दुर्गा जी की आरती

जै अम्बे गौरी मैया जै मंगल मूर्ति मैया जै आनन्द करणी ।
तुमको निशदिन ध्यावत हरि, ब्रह्मा, शिवजी ।। टेक ।।

मांग सिन्दूर विराजत टीकौ मृगमद को ।
उज्जवल से दोऊ नैना चन्द्र बदन नीको ।। जै अम्बे०

कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे ।
रक्त पुष्प गल माला कंठन पर साजै ।। जै अम्बे०

केहरी वाहन राजत खड्ग खप्परधारी ।
सुर नर मुनि जन सेवक तिनके दुखहारी ।। जै अम्बे०

कानन कुण्डल शोभित नाशा गज मोती ।
कोटिक चन्द्र दिवाकर सम राजत ज्योति ।। जै अम्बे०

शुम्भ निशुम्भ बिदारे महिषासुर घाती ।
धूम्रविलोचन नैनन निशि दिन मदमाती ।। जै अम्बे०

चण्ड मुण्ड संहारे, शोणित बीज हरे ।
मधु कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे ।। जै अम्बे०

तुम ब्रह्माणी तुम रुद्राणी, तुम कमला रानी ।
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी ।। जै अम्बे०

चौसठ योगनी मंगल गावत नृत्य करत भैरों ।
बाजत ताल मृदंग अरू बाजत डमरू ।। जै अम्बे०

तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता ।
भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पत्ति करता ।। जै अम्बे०

भुजा चार अति शोभित खड्ग खप्परधारी ।
मनवाँछित फल पावत सेवत नर नारी ।। जै अम्बे०

कंचन थार बिराजत अगर कपूर बाती ।
श्रीमाल केतु में राजत कोटि रतन ज्योति ।। जै अम्बे०

दोहा—श्री अम्बे जी की आरती, जो कोई नर गावै ।
कहत शिवानन्द स्वामी, सुख सम्पति पावै ।।

वैष्णोदेवी दरबार यात्रा

हरभजन सिंह एण्ड सन्स, हरिद्वार